यह पुस्तक खेमराज श्रीकृष्णदासने खेतवाड़ी ७ वीं गली खम्याटा लेन निज ''श्रीवेड्डटेश्वर'' स्टीम् प्रेस वम्बई में अपने लिये छापफर प्रकाशित किया।

यह पुस्तक खेमराज श्री निज "श्रीवेड्डटेसर" स्टीम् प्रेस BAN SCREEN VIDYAL Central Library

गायत्री. र्युकामिन्दुनिवद्धरत्नमुकुटां तत्त्वार्थवर्णात्मिकाम् ।



शंखं चक्रमधारविंदयुगुलं हस्तैर्वहर्न्तां भजे ॥ १ ॥

अथ गायशीयन्श्राथेमारकरः शारम्यते।

गायत्रीसगुणध्यातस् ।

संस्कृतम् ।

(१) सुक्ताविद्यसहेसनीलधवलच्छायैसुखै-

स्त्रीक्षणैर्युक्तासिन्दुनिवद्धरत्नसुकुटां तत्त्वार्थवर्णा-त्सिकाम्॥ गायत्रीं वरदोभैयाङ्करार्करां शूंलं कर्पाल-

हुँणं र्राङ्खं चक्रेसथारविन्दर्युंगुलं हस्तैर्वहन्ती-म्सजे ॥ १ ॥

मुक्ता विद्वम (मूंगा) सुवर्ण, नीलम और स्फटिकके छविवाले तीन तीन नेत्रवाले [पांच] मुखोंसे युक्त, चन्द्रमासे सुशोभित राजमुकुटवाली, चौवीस अर्थ और

भाषा।

वर्ण स्वरूप वाली, वरेद अभैय अंकुंश कोडों शूलें मुण्डें पाशं शंख चर्क और दो कमेंलोंको (दश) हाथोंसे धारण

करती हुई श्रीगायत्री देवीको मैं भजताहं ॥ १ ॥

⁽१) देवीभागवते । स्क०१२ । अ०३ । श्रो०१०।

(४) गायत्रीसगुणध्यानम् ।

संस्कृतम् ।

(१) इवतवर्णा ससुद्दिष्टा कौशेयवसना तथा। इवेतैर्विलेपनैः पुष्पेरलङ्कारैश्च भृषिता॥१॥

आदित्यसण्डलस्था च त्रह्मलोकगताथवा। अक्षसूत्रभरा देवी पद्मासनगता शुभा॥ २॥

भाषा ।

गायत्री देवी, श्वेतवर्ण, रेशमी वन्त्रको धारण किये हुए, श्वेत चन्द्रन और श्वेत पुष्पोंकी माला और सव भूषणोंसे भूषित, तथा श्वेत रुद्राक्षकी माला धारण किये हुए, पन्नासनसे स्थित, सूर्यमण्डल अथवा ब्रह्मलोकमें विराजमान हैं ॥ १ ॥ २ ॥

(१) बृह्द्योगियाज्ञवब्स्यसंहिता अः ४ क्ष्री ० २७ । २८

तिर्गुणध्यातस् ।

संस्कृतम् ।

(१) हृदयकसलसध्ये दीपबद्देदसारं प्रणवम-यसतक्र्यं योगिभिर्ध्यानगम्यम् ॥ हरिगुरुशिवयोगं सर्वभूतस्थसेकं सक्रदृषि सनसा वै ध्यायते यः स सुक्तः ॥१॥

साषा ।

हृद्यकमलमें शुद्ध दीपशिखांके ज्योतिके समान सर्व-वेदोंका सारभृत, प्रणवरूप, तर्कनारहित योगियोंके ध्यान-द्वारा जानने योग्य विष्णु, गुरु, शिवस्वरूप, सर्वभूतोंमें चैतन्यरूपसे विराजमान, अद्वितीय परत्रह्मरूप गायत्रीका मनसे जो पुरुष एक बार भी ध्यान करता है वह जीव-न्मुक्त है ॥ १ ॥

⁽१) गायत्रीहृदये।

भृदिः।

८७ षृष्ठे स्कान्दीयसूतसंहितोक्तमन्त्रव्याख्या विद्यारण्यस्वामिकृता ।

अन्तर्यासितया रिथतो यो देवः स नोऽस्माकं धियो वुद्धीर्धर्भज्ञानाहिषु त्रचोदयात्त्रेरयेत् । "चुद्-प्रेरणे" इत्येतस्माल्लेटग्राडागमः । तस्य देवस्य द्योतसानस्य स्वयं प्रकाशचिद्रपस्य सर्वप्राणि-हृद्यास्ट्रुजमध्यवर्त्यन्तःकरणादिसाक्षित्वेन वर्त-सानस्य सवितुः प्रेरकस्य शिवस्वरूपसूतं तत्सृष्टि-स्थितिसंहारकारणतया प्रसिद्धं वरेण्यं सर्वप्राणि-सेटएं सर्गो सर्जनात्पापस्य सर्जकं सत्यज्ञानादिलः क्षणं स्वसायाशक्तिवशेन शिवरुद्रादिसंज्ञापन्नं सूर्य-मण्डलसध्ये तत्प्रेरकत्त्रेनावस्थितं वाञ्चनसातीत-सीहरिवधं यत्परं त्रह्म तद्वयं धीसिह ध्यायेस। तदे-वाह्रससीति जानीयामित्यर्थः। "ध्यै चिन्तायाम्" इत्यत्माहिङि छान्दसं रूपम्, तदुक्तमाचार्यैः-"ध्ये चिन्तायां स्पृतो थातुर्निष्पन्नं धीसहीत्यतः" इति।

संस्कृतसूमिका।

संस्कृतम् ।

सर्ववेदसारभूतब्रह्मात्मैक्यवोधक विद्वजनेषु गायत्रीसन्त्रो विदितोस्ति । तस्य सर्वकर्सादावनु-ष्टानं तदकरणे प्रायश्चित्तं चान्यस्मिन्ननिधकारं शास्त्रेषु निर्दिष्टस् । पुनरिप यत्सर्वश्रुतिस्मृतीति-हासपुराणप्रभृतीनां संसारदुःखनिवृत्तिपूर्वकनि-त्यकैवल्यानन्दावासिप्रयोजनसस्ति तत्केवलैतन्मं-त्रेण मलविक्षेपावरणनिरसनपूर्वकेण सिद्धं भवती-त्युच्यते । ''यज्ञानां जपयज्ञोस्मीति" भगवद्गी-तोक्तवचनात् सर्वयज्ञेषु निर्द्धनपुरुषसुसाध्यत्वा-यज्ञस्याधिकत्वम्; **द्धिंसादिरहितत्वा**च पुनः "सर्वेषां जपसूक्तानां गायत्री परमो जपः," इति-पराशरोक्तवचनात्सर्वजपसृक्तेषु साक्षाद्भृह्योपास-नात्वाद्वायत्रीजपस्य परत्वम् । पुनः 'गायन्तं त्रायते यस्मात्पातकादुपपातकादिति' व्यासवच-

सर्वोत्क्रप्रगायत्रीजपेल सर्वमहापातकादि सलाभिहननस्भवति । ''असावादित्यो तथा ब्रह्म" "सूर्य आत्सा जगतस्तस्थुवश्च" 'योऽसावा-दित्ये पुरुषः सोसावहस्' इत्यादिश्रुतिभ्यस्तम्म न्त्रार्थरूपस्य सूर्यसण्डलहृत्युण्डरीकान्तर्गतपरसे चिन्तनात्मकोषासनया विक्षेपनिरसनं भवति । तथा च तत्त्वरूपलक्ष्यभूतब्रह्मात्मैश्य-ज्ञानेनावरणक्षयो भवति । एवं त्रीणि सुक्तिप्र-तिवन्धकानि नश्यन्ति । ततोऽर्थधर्स्सादिपुरुषार्थः चतुष्टयसारभूतसालोक्यादिचतुष्कसारसभं सायुज्यकैवल्यपदं भवति । यद-सानन्दस्रक्षणं विद्यावीजविलसितसुषुप्त्यवस्थायाम्-अज्ञानकार्य-विलयाद् दुःखनिवृत्त्यात्मकं विषयानन्दोत्कृष्टं लक्कजतातुभूतसुखमस्ति । तस्तादि कैवस्यपदे अज्ञाननिवृत्तिपूर्वकानन्दावादिरूपं द्यत्यन्तोत्कृष्ट-तसं सुलस्भवति परञ्च "यदेव विद्यया करोति

श्रद्धया तदेव वीर्य्यवत्तरहस्यवति ॥" (छान्दोग्य०)

''तज्जपस्तदर्थभावनम् ।" (योगसृ०) ''वेदस्या-ध्ययनं सर्वं धर्म्भशास्त्रस्य चापि यत्। अज्ञातार्थं

तु तत्तर्यं तुपाणां खण्डनं यथा" (ट्यासः) ''स

वेदपाठमात्रेण सन्तुष्टो यो अवेद् द्विजः। पाठसा-त्रावसायी तु पङ्के गौरिव सीदाति ॥" योऽधीरय

विधिवद्विप्रो न वेदार्थं विचारयेत् । स सान्वयः

शूद्रससः पात्रताम्न प्रपद्यते" (सनुः) 'योऽधीतेऽ-हन्यहन्येतां गायत्रीं वेदसातरम् । विज्ञायार्थं

ब्रह्मचारी स राति परसाङ्गतिम् " (कूर्सपु०)

''जपस्याभ्यन्तरे व्याख्या स्मर्तव्या मनसा द्विजैः।

स्मरणात्सर्वपापानि प्रणइयन्ति न विश्वासभक्तिजननं मन्त्रैर्यज्ज्ञानमुत्तसम् । तस्सा-

दर्थं विजानीयाद्यत्नेन जपक्चद् द्विजः" (भारद्वाजः) इत्यादिवावयेभ्यस्तदुपासनायास्तदर्थज्ञानसाध्य-

TOP TO THE TRANSPORT OF THE PROPERTY OF THE PR त्वात् तदर्थज्ञानस्यावश्यकत्वस् । रिजनोपकारार्थं मतान्तराक्षेपिनरसनपूर्वकमल-भ्यानेकश्रुति, स्मृति, पुत्तण, भाष्यादिग्रन्थेभ्यः सारभूतं प्रधानार्थं सम्रुद्धृत्य यथास्थानं संयोज्य गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः संकलितः । तस्य वहामित्र जनसम्मतानुमोदनाय भाषाटीकापि कारिता ।



भाषासूमिका।

विद्वजनोंको गायत्रीमन्त्र विदित ही है जो चारों वेदोंका सार है और जो ब्रह्म और जीवात्माकी एकताका बोधक है। शास्त्रोंमें ऐसा लेख है कि वेदविहित कमोंके आरम्भमें गायत्री मनत्रका अनुष्ठान होता है, ऐसा न करनेसे प्रायश्चित्त (पाप) होता है और अन्य सत्कर्म करनेका अकिकार नहीं रहता है । पुनः समस्त श्रुति, स्मृति, इतिहास, पुराणादिका लक्ष्य यही है कि संसार-द्धःखकी निवृत्ति और नित्य कैवल्यानन्दकी प्राप्ति हो, यह केवल गायत्रीमन्त्र द्वारा ही फलीभूत हो सकता है क्यों-कि गायत्री मन्त्रका आश्रय छेनेसे ही मल, विक्षेप और नाश होता है (यज्ञानां जपयज्ञोस्मि) आवरणका यज्ञोंमें मैं जपयज्ञ हूँ, भगवान् श्रीकृष्णके इस वास्यके अनुसार सब यज्ञोंमें हिंसा तथा द्रव्यव्ययके अभावके कारण जपयज्ञका ही महत्त्व अधिक है, पुनः " सर्वेषां जपसुक्तानां गायत्री परमो जपः '' सब प्रकारके जपोंमें गायत्रीजप श्रेष्ठ है पराशरम्भिके इस वचनके अनुसार साक्षात् ब्रह्मकी उपासना होनेके कारण गायत्री अन्त्रका जप सब जपोंमें श्रेष्ठ है। पुनः ''गायन्तन्त्रायते यस्त्रा-त्पातकादुपपातकात् " इस महर्षि व्यासजीके वचनके अनुसार जो गायत्री मन्त्रका गान (जप) करता है उसकी रक्षा यह मन्त्र पातक (महापातक) और उपपात

कसे करता है । इस वचनके अनुसार सर्वश्रेष्ठ गायत्री-जप हारा सवप्रकारक महापातकादि मलोंका नास होताहै। (यह मृर्घ्य जो तथा " असा बादित्यो ब्रह्मं शमण्डलमें उदय होता है और अपने प्रकाशस रका नाश करता है यही ब्रह्म है जगतस्वस्थुपश्च '' (सूर्य्य चर और अचर दोनों प्रका-11 हैं) योऽवादादित्ये रकी सृष्टिका आत्मा सोसावहम् "(जो पुरुष् सूर्यमें है इत्यादि श्रुतियों द्वारा यह प्रतिपादित होता है त्रीमन्त्रार्थ हर जो तेजोमय पुरुष मृय्यमण्डल हमारे हृदयकमलमें विराजमान है उसका चिन्तन करनेसे विक्षेपका नाश होता है। गायत्रीमन्त्रमें भी यही सना प्रतिपाद्य है। तथा उस तेजोमय पुरुषके स्वरूप अर्थात् ब्रह्मात्मेक्यका जो ज्ञान होता है आवरणका क्षय हाता है। इस प्रकार तीनों योक्षके बम्धकोंका नाश होता है इन प्रतिवन्धकोंके क्षय होनेसे पुरुषार्थं चतुष्टयमें सारभृत मोसकी और मुक्ति चतुष्टयमें अतिश्रेष्ठ परमानन्द्रूप सायुज्य कवल्यपदकी प्राप्ति होती है। सब लोगोंका यह साधारण अनुभव है कि अविद्या-बीजविलिसित सुषुप्ति अवस्थायं अज्ञानके कार्यीक लोप होनेसं मर्व दुःख निरुत्ति पूर्वक विषयानन्दम् उत्कृष्ट सुख होता है उसम भी अधिक कवल्यपद प्राप्त होने पर अज्ञान-निरृत्तिपूर्वक अत्यन्त् उत्कृष्ट अक्षय सुख्होता है। निश्चय करके जो सत्कर्म अर्थज्ञान तथा श्रद्धापूर्वक किया जाताहै अधिकतर वलिष्ठ होता है (छान्दोग्य)

ॐ कारका जप करना और उसके अर्थका चिन्तन करना (योगसृत्र) 'वेद तथा धर्मशाम्त्रोंका अध्ययन जो विना अर्थके किया जाता है वह ऐसा है जैसे भूसी कूटना (ज्यास) जो दिज वेदके पाठमात्रसे सन्तुष्ट रहता है उसने केवल पाठमात्रका ही कप्ट उठाया है और वह उसी प्रकार खेद को प्राप्त होताहै जैसे कीचड़में फँसी हुई गऊ "जो विप्र विधिपूर्वक वेदका अध्ययन वेदके अर्थको नहीं विचारता वह वंशसहित हे और सुपात्रताको नहीं प्राप्त होता है'' बह्मचारी प्रतिदिन वेदोंका कारण इस गायत्रीके अर्थका जानकर जप करता है वह परम गतिको प्राप्त ''द्विजोंको उचित चिन्तन करते रहें क्योंकि अर्थके स्मरणसे सब पाप नष्ट होजाते हैं। मन्त्रका जो वही विश्वास और भक्तिको उत्पन्न करनेवाला लियं जप करनेवाले द्विजको यन्नपूर्वक अर्थ उचित है^{''} (भारद्वाज) इत्यादि वाक्योंसे कि गायत्री मंत्रके अर्थका ज्ञान भी आवश्यक क्योंकि संत्रके अर्थज्ञान विना उपासना साध्य नहीं है इस कारण अधिकारी पुरुषोंके उपकारके मन्त्रार्थ भास्कर" नामक प्रन्थकी रचना हुई ग्रन्थमें भित्र भित्र सम्प्रदायोंके मतोंका उन्नेख न करके केवल अनेक अलभ्य श्रुति, स्मृति, पुराण, सारभूत प्रधान अर्थ लेकर यथोचित स्थानमें रखदिया गया है। इति ।

विषयानुक्रमणिका।

विषयाङ्काः ।			पृष्	गङ्गाः
१ मंगल।चरणम्	••••	••••		۶.
२ गायत्रीमहत्त्वम्		****	****	8
३ गायत्रीब्रह्मक्यम्		****	****	80
४ कालमेदन गायत्रीनामानि	• • •	****	1141	99
९ गायत्रीनामार्थः		****	# # 70	"
६ वर्णाश्रमिणां तन्मन्त्रभेदाः		4057	****	१७
७ ब्रह्मचारिगृहस्थयोः		•••	••••	१८
८ वानप्रस्थादीनाम्	****	****	****	38
९ गायत्रीप्रणवसंयोगकरणे ह	हेतुः	****		7,7
१० गायत्रीमन्त्रः		****	****	79
११ गायत्रीपदच्छेद:	****	****	****	7,
१२ अन्वयः	****	****	4000	79
१ ३ प्रणवमहत्त्वम्	•••	****	****	२३
१४ प्रणवस्य ब्रह्मबोधकत्वम्	****	4+4]		29
१५ प्रणवफलम्	•••	4460	1	२७
१६ प्रणवनामानि		4457	****	26
१७ पदार्थाः	****	_	24.04	२९
१८ मात्रामेदाः	****	****	1004	३२
१९ मात्राभेदेष्वग्न्यादीनां व्यास्	ह्याः -	••••	****	३३
२० प्रकारान्तरेण मात्रार्थाः	****	* 6 * 0 *	***	३८
२१ व्याहृत्यर्थः	****	****		8 6
२२ भू:-पदार्थः	****	****	****	88

্বি 	विषयानुकमणिका ।			(%;)	
विषयाङ्काः ।			্ যু	ចធ្លោះ	
२३ भुवः-गृदार्थः	****	••••	****	8.5	
२४ स्वः-पदार्थः	4***	••••	****	8.8	
२९ नन्-रदार्थः	****	****	••••	ខ្លួន	
२६ सचित:-पदार्थः	***	****		37	
२ ० वरेण्यं-पदाधः	****	****	****	G .9	
२८ मर्गः-पदार्थः	••••	••••	****	€0	
२९ देवस्य-पदार्थः	***	****	***	90	
६०-भीनिः-पद्यिः		• •	****	13	
३१ भिय:-पदार्थः	4 9 9 9	***	****	56	
६२ या-यदार्थः	****	****	****	'ও'ঙ	
६६ नः-पदार्थः	****	****	****	७८	
३४ प्रचोद्यात्-पदार्थः	****	****	****	ઙ૬	
१५ बृहचोगियाइयलयोक्तर		****	****	(0	
२६ भरद्राजस्युन्युक्तगायत्रीम	सध्यम्	****	****	ζδ	
६७ अगस्योक्तस्टोकः		****	4000	۲٤	
६८ बृहत्पासवारोक्तस्त्रोकः	****		4***	(0	
३९ स्तसंहितोक्तमंत्रार्थः	1000	****	****	23	
४० आंग्रयनिर्वाणतन्त्रोक्तमं	ग्रार्थः		****	((
४१ डन्बटभाष्यम्	••••	1000	****	९०	
४२ सायनमाष्यम्		****	****	65	
४३ रावणभाष्यम्	****	****	****	९४	
४ ४ महीधरमाष्यम्	****	****	****	99	
४५ श्रीमच्छङ्करमाष्यम्	****		****	९९	

विपयानुक्रमणिका । ४६ विद्यारण्यस्वामिकृतमंत्रार्थः ४७ भट्टोजिद्धितविरचितमाप्यम् ४८ वरदराजभाष्यम् ४९ तारानायतर्कवाचस्यत्युक्तगायत्री वाक्यार्थः ५० विष्णुधर्मोत्तरोक्तमंत्रवर्णार्थः 201 ५१ निष्कर्पः ५२ मार्यार्थः 908 ५३ नायत्रीजपमहत्त्वम् ५४ जपभेदः तत्फलज ५५ जपकाछ: 388 ५६ जपस्थानं तत्फलज ५७ जाविधिः 111 ५८ मालाविवरणम् 119 ५९ जपसंख्या 198 ६० जए५७म् 177 ६१ गायन्त्रप्टकम् 129 ६२ सूर्ग्रप्रार्थना 130 प्रंथसमाप्ति... 139

गायत्रीसन्द्रार्थभास्करः।

भाषाटीकासहितः।



सङ्गलाचरणस् ।

संस्कृतम् ।

(१) ध्यात्वा ब्रह्म प्रथमसतत् प्राणम् ले नदन्तं हप्या चान्तः प्रणवमुखरं व्याहृतीः सभ्यगुक्त्वा॥ यत्तद्वेदे तदिति सवितुर्वह्मणोक्तं वरेण्यं तद्भ-र्गाख्यं किमपि परमं धास गर्भ प्रपद्ये॥१॥

भाषा ।

प्रथम विश्व ब्रह्मको ध्यानकर, भीतर हृद्यवायुके मृटस्थानमें अध्यक शब्दको करते हुए, आदिमें (ॐ) तब ब्याहति (भूर्भुवः स्वः) को सटे प्रकारसे कह (तत्) यह और (सवितुर्वरेण्यं) ऐसा वेदमें ब्रह्माजीसे कथित को देखकर (भगों) भर्ग नामक कोई अनिर्वचनीय तेजके शरणमें में प्राप्त होता हूं ॥ १ ॥

(१) साम्बपद्धाशिकायाम्।

(२) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः ।

संस्कृतम् ।

(१) यन्मण्डलं व्याधिविनाशदक्षं यद्दग्यजुः-सामसु सम्प्रगीतम् ॥ प्रकाशितं येन च भूर्भुवः स्वः पुनातु सां तत्सवितुर्वरोण्यम् ॥ २ ॥

यन्सण्डलं ज्ञानघनं त्वगम्यं त्रैलोक्यपूज्यं त्रिगुणात्मरूषम्॥समस्ततेजोमयदिव्यरूपंपुनातु सांतत्सवितुर्वरेण्यम्॥३॥

भाषा ।

जो सूर्यमण्डल व्याधियोंके विनाश करनेमें समर्थ है, जो ऋक, यज्ज और सामवेदमें सम्यक् प्रकारसे गान किया गयाँहै, जिससे धूर्धुवः स्यः प्रकाशित होता है (तत्स-विनुविरेण्यम्) वह सूर्यदेवका वर्णनीय तेजवाला मंडल मुझे पवित्र करें ॥ २ ॥

जो मण्डल तिविड़ ज्ञानहर, अगम्य, त्रेलोक्यएड्य, त्रिगुणात्मस्वरूप और समस्त तंजोमय दिव्य स्वरूप है, वह सूर्य देवका वर्णनीय तेजवाला मण्डल मुझे पवित्र करें ॥ ३ ॥

⁽१) महाभारते ।

गायत्रीसहत्त्वस् ।

संस्कृतम्।

- (१) गायत्री छन्दसासहम् ॥ १ ॥
- (२) गायत्री छन्दसां सातेति ॥ २॥
- (३) नास्ति गंगासमं तीर्थं न देवः केशवात्परः।

गायण्यास्तु परं जप्यं न भूतं न भविप्याति ॥३॥

भूर्भुवः स्थारिति चैय चतुर्विशाक्षरास्तथा। गायत्री चतुरो वेदा ओङ्कारः सर्वसेय तु॥ ४॥

भाषा ।

छन्दोंमें गायत्री छन्द में हूं ॥ १॥

गायत्री वेदोंका आदि कारण है ॥ २ ॥

गंगाके समान कोई तीर्थ नहीं है; केशव भगवानसे परे कोई देवता नहीं है; गायत्रीसे परे कोई जप न हुआ है न होगा ॥ ३॥

भूर्भुवः स्वः यह तीन सहान्याहतियां और चौबीस अक्षरवाली गायत्री चारों वेद स्वहृप है और निस्सन्देह

ओंकार सर्वहर है ॥ ४ ॥

⁽१) भगवद्गीता अध्याय १०।३५।

⁽२) महानारायणोपनियदि १५।१।

⁽३) वृ० यो० याज्ञ अ० १०।१०; २।७९; ४।१६।

संस्कृतम्।

यथा मधु च पुष्पेभ्यो घृतं दुग्धाद्रसात्पयः। एवं हि सर्ववेदानां गायत्री सारमुच्यते॥ ५॥

(१) त्रिभ्य एव तु वेदेभ्यः पादभ्पादमदूदुहत्। तदित्यृचोऽस्याः सावित्र्याः परमेष्ठी प्रजापतिः॥६॥

(२) अष्टादशसु विद्यासु सीमांसाऽतिगरीयसी।

ततोऽपि तर्कशास्त्राणि पुराणं तेभ्य एव च ॥७॥ ततोऽपि धर्मशास्त्राणि तेभ्यो गुर्वी श्रुतिर्द्धिज।

ततोप्युपनिषच्छ्रेष्टा गायत्री च ततोऽधिका ॥ दुर्रुभा सर्वसन्त्रेषु गायत्री प्रणवान्विता ॥ ८ ॥

भाषा ।

जैसे फूलोंका सार मधु, हूथका सार वृत, रसका सार हूथ है इसी प्रकार सब भूतोंका सार गायत्री मंत्र कहा जाता है ॥ ५ ॥

परमेष्ठी प्रजापति (ब्रह्मा) ने तीन ऋचावादी गायबीके तीनों चरणोंको तीनों वदोंसे सारभूत निकाल हं ॥ ६ ॥ अठारहीं विद्यामें भीमांसा अति श्रेष्ठ है तिससे भी

त्यायशास्त्र और न्यायशास्त्रसे पुराण श्रेष्ठ हैं ॥ ७ ॥ हे दिज! तिससे भी श्रेष्ठ धर्मशास्त्र हे और उससे भी श्रेष्ठ वेद हैं वेदसे श्रेष्ठ उपनिषद् तिससे भी गायत्री मंत्र श्रेष्ठ है, फ्रणवयुक्त यह गायत्री सर्व मंत्रोंमें दुर्लभ है ॥ ८ ॥

⁽१) मनु• अ॰ २। श्लो॰ ७०।

⁽२) वृ॰ सन्ध्याभा ।

गायत्रीमहत्वम् । संस्कृतम् । (१) एकाक्षरं परं त्रह्म प्राणाचासाः परन्तपः साविज्यास्तु परन्नास्ति पावनं परसं स्पृतस ॥ ९ ॥ पाउन्तरम्--(सोनात्नत्यं विशिष्यते) (२) तदित्यृचः समो नास्ति संत्रो वेदचतुष्टये। がまっていていていていませんできません。 できないできないできない。 सर्वे वेदाइच यज्ञाश्च दानानि च तपांसि च॥ ससानि कलया प्रासुर्हुनयो न तदित्यृचः॥ १०॥ (३) सर्वेपां जपसूक्तानामृचाञ्च यजुपां तथा। सान्नां चैकाक्षरादीनां गायत्री परमो जपः ॥ ११ ॥ आषा । एकाक्षर (ॐ) परत्रह्म है, प्राणायाम परमतप है, गायत्रीसे परे कोई मंत्र परमपवित्र नहीं है। तथा सत्य वालना मानसे श्रेष्ठ है ॥ ९ ॥ चारों वेदोंमें गायत्रीके समान कोई मन्त्र नहीं है। मुनिलोग कहते हैं, कि गायत्रीके एक कलाके समान सर्वषद, सर्वयज्ञ, सर्वदान और सर्वे तपस्याएं नहीं हैं ॥ १० सव जपस्कोंमें ऋग्यजुःसामवेदों आंर सन्त्रोंमें गायत्री परम जप है॥ ११ ॥ (१) मनु॰ अ॰ २। स्ट्राँ० ८२। अविसमृ॰ अ॰ २। स्ट्राँ० ११। (२) विश्वामित्रः। ३) वृ० पाराशर स्मृ० अ० ।४।४।

(६) गायत्रीयन्त्रार्थभास्तरः।

संस्कृतम्।

(१)साङ्गारच चतुरो वेदानधीत्यापि सवाड्ययान्। सावित्रीं यो न जानाति वृथा तस्य परिश्रमः॥ १२॥

- (२) गायत्री चैव वेदाश्च ब्रह्मणा तोलिता पुरा। वेदेभ्यक्च सहस्रेभ्यो गायज्यतिगरीयसी ॥ १३॥
- (३) सर्ववेदसारभूता गायञ्यास्तु समर्चना । ब्रह्मादयोऽपि संध्यायां तां ध्यायान्ति जपन्ति च॥१४॥
- (४) गायज्युपासना नित्या सर्व वेदैः समीरिता। यया विना त्वधःपातो ब्राह्मणस्यास्ति सर्वथा॥१५॥

भाषा ।

स्वर तथा अङ्ग सहित चारों वद पढ़ने परशी जो गायत्री मन्त्रको नहीं जानता है, उसका परिश्रम निष्फल है ॥१२॥ पूर्व कालमें ब्रह्माने गायत्री और वदोंको ताला तो सहस्रों वदोंसे भी गायत्रीका पहा भारी पाया॥१३॥ गायत्रीका आराधन सब वदोंका सारहूप है सन्ध्याकालमें

ब्रह्मादिक भी तिसका ध्यान सहित जप करते हैं ॥ १४ ॥ सर्व वेदोंमें गायत्रीकी नित्य उपासना वर्णित है, जिसके विना सर्व प्रकारसे ब्राह्मणोंकी अधोगित होतीहै ॥ १५ ॥

- (१) योगियाज्ञवस्कय ।
- (२) वृ॰ पाराशर॰ । अ॰ ५।१६।
- (३) देवी भागवते स्कं ०११। अ०१६। इली० ११५।
- (४) देवी भागवते स्कन्ध १२। अ०८। ख्लो० ९**।**

संस्कृतम् ।

(१) गायत्रीसात्रनिज्णातो द्विजो सोक्ष सवाप्तु-

यात्॥ १६॥

(२) गायत्र्याः परसं नास्ति दिशि चेह च पाव-नम् । हस्तत्राणप्रदा देवी पततां नरकार्णवे ॥१७॥

(३) किं वेदे पठितेः सर्वेः सेतिहासपुराणकेः।

साङ्गे सावित्रहीनेन न विप्रत्वसवाप्तुयात्॥ १८॥

भाषा ।

कवल गायत्री मात्रकी उपासनासे द्विज मोक्षको प्राप्त

होता है ॥ १६ ॥

इस लोक तथा परलोकमें पवित्र करनेवाला गायत्रीसे परे कोई मंत्र नहीं है क्योंकि नरकरूप समुद्रमें गिरते

हुएको यह गायत्री हाथ पकडकर बचाती है ॥१०॥ अङ्गसहित सर्व वेद तथा इतिहास पुराणादिकोंके पढ़नेसे

क्या हुआ जो गायत्रीमंत्रकी उपासनासे हीन है वह ब्राह्मणश्वको नहीं प्राप्त होता है ॥ १८ ॥

(१) देः भाः स्कं १२। अ०८ स्ट्रीः ९०।

(२) शर्वसमृ अ०१२ इलो० २५।

(३) वृ॰ पारासर अ॰ ५।१४।

(८) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः।

संस्कृतम् ।

(१) त ब्राह्मणो वेदणठान्न शास्त्रपठनादि। देटयास्त्रिकालमभ्यासाद्वाह्मणः स्याद्विजोऽ-न्यथा ॥ १९॥

(२) गायज्यास्तु परस्नास्ति शोधनं पाप-कर्शणाम् । सहाज्याहृतिसंयुक्तां प्रणवेन च

संजपेत् ॥ २० ॥

(३) गायत्रीं यः परित्यज चान्यमंत्रमुपासते। न साफल्यसवामोति कल्पकोटिशतैरपि॥२१॥

भाषा ।

वेद और शास्त्रके पढ़नेसे भी बाह्मण नहीं हो सकता है त्रिकाल गायत्रीकी उपासनासे बाह्मण कहा जाता है अन्यथा द्विजहीं रहता है ॥ १९॥

गायत्रीकी उपासनासे परे पापकमांके शोधनक लिये कोई मंत्र नहीं है अतः प्रणव तथा महान्याहति सहित गायत्रीका

भन्न नहा ह जता ने यूप त्या प्रशासाल सार्या जप करें ॥ २० ॥

गायत्रीको छोड़कर जो दूसरे मंत्रकी उपासना करता है, वह शतकोटि कल्पतक भी सफलताको प्राप्त नहीं कर सकता है ॥ २१ ॥

⁽१) वृ० सम्ध्याभाष्ये ।

⁽२) सम्वर्तसम् । रही ० २१८।

⁽३) वृ० सन्ध्याभाष्ये ।

एए एव संत्रो द्विजत्वसंपादकोपनयनसंस्कारे उपिद्ययानो गुरुसंत्र इत्युच्यते, सर्वे राजान इससेव

デスタンショウのからからからない から ひら ひら からからからならならなる できる かん श्चन्द्रवंशीयाश्च शुचयो भूत्वा नित्यं जपन्ति स्म । यथा सहाभारते

अनुशासनपर्वणि अ० १५० इस्रो० ७८ युधि भीष्मवाक्यम्। सोसादित्यान्वयाः

सर्वे राघवाः कुरवस्तथा । पठन्ति शुचयो नित्यं सावित्रीं परमां गतिम् ॥ श्रीरायचन्द्रकर्तृकनित्य-

सन्ध्योपासनं (गायत्रीसंत्रजपः) तु वाल्सिकीये वहुषु स्थलेपूपवर्णितामिति विदितसेवास्ति ॥२२॥

भाषा ।

मंत्र द्विजल्ब-संपादक-उपनयनसंस्कारमें गुरुमंत्र कहा जाताहै । इसी किया गया सूर्यवंशी तथा चंद्रवंशी राजन्यगण पवित्र होकर नित्य जपा करते थे जैसा कि (महाभारतक अनुशासन पर्वमें १५० अध्यायक ७८ वें रहीकमें) युधिष्ठिरक प्रति भीष्मने कहा है, कि सूर्य और चन्द्रवंशके सब कोई तथा रघुवंशी कुरु-वंशी (विशेष) पवित्र होकर नित्य परमगति दायिनी

सावित्रीको जपा करते हैं। श्रीरामचन्द्रजीका किया सन्ध्यो-पासन (गायत्रीमंत्रजप) वाल्मीकीय रामायणमें कई एक

स्थलमें वर्णित है इति ॥ २२ ॥

(१०) गायत्रीमन्त्रार्थभास्तरः।

संस्कृतम् ।

(१) नान्नतोयसमं दानं न चाहिंसापरं तपः । न सावित्रासमं जप्यं न व्याह्मतिसमं हुतम् ॥२३॥

भाषा ।

अन्न और जलके समान दान, अहिंसाके समान तप, सावित्रीके समान जप और व्याहतिसमान कोई आहुति नहीं है ॥ २३ ॥

गायत्रीव्रह्मेक्यस् ।

संस्कृतम् ।

- (२) त्रह्म गायत्रीति-त्रह्म वै गायत्री ॥ १ ॥
- (३) गायत्री परमात्मा ॥ २ ॥
- (४) गायत्री परदेवतोति गदिता ब्रह्मेव चिद्रपिणी ॥ ३ ॥

भाषा ।

ब्रह्म ही गायत्री है ॥ १॥ गायत्री परमात्मा है ॥ २॥

गायत्री सबसे परे देवता और चैतन्यरूपिणी बहा है ऐसा कहा गया है ॥ ३ ॥

- (१) सृतसंहितायां यज्ञवैभवत्वण्डे (अ०६ दलो०३० ५० १६९)
- (२) शतपथन्नाह्मणे। ८।५।३।७। ऐतरेय त्रा॰ अ॰ २७। एं॰ ५,
- (३) गायत्रीतत्वे । स्लो० ९ ।
- (४) गायत्रीपुरश्चरणप०।

गायत्रीब्रह्मैक्यम् । (११)

संस्कृतम् ।

(१)अथो वदासि गायत्रीं तत्त्वरूपां त्रयीमयीस्॥ यथा प्रकारयते ब्रह्म सिचदानन्दरुक्षणम् ॥ ४ ॥

(२) असावादित्यो ब्रह्म ॥ ५ ॥

さらながらできませずまたなななななもなな**なななななる**

- (३) सूर्य आतमा जगतस्तस्थुपर्च ॥ ६ ॥
- (४) गायत्री वा इदं सर्वम् ॥ ७ ॥
- (५) गायत्री वा इदं सर्वभूतं यदिदं किञ्च॥८॥

भाषा ।

तत्त्वरूपिणी त्रिवेदमयी गायत्रीको में कहता हूँ, जिससे सिचदानन्द स्क्षण बहा प्रकाशित होताहै, अर्थात् ब्रह्मका ज्ञान होताहै ॥ ४॥

यह प्रत्यक्ष सूर्यदेव ब्रह्मरूप हें ॥ ५ ॥

यह सूर्य भगवान् चर अचर सृष्टिका आत्मा है ॥ ६ ॥

यह सब सृष्टि गायत्रीहर है ॥ ७ ॥

यह संसार जो कुछ है वह सब गायत्रीहर है ॥ ८ ॥

- (१) गायत्रीतस्ये । इत्ये २ १ ।
- (२) महाचाक्योपनिपदि।
- (३) सुर्योपनिपदि ।
- (४) द्वींमहपूर्वतापनीयोप० ४।२।
- (५) छान्दोग्योप० ३।१२।१।

(१२) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः ।

संस्कृतम् ।

(१) न भिन्नां प्रतिपचेत गायत्री ब्रह्मणा सह ।

सोहसस्मीत्युपासीत विधिना येनकेनचित् ॥९॥ (२) देवस्य सवितुस्तस्य धियो यो नः प्रचोदयात्।

भगों बरेण्यं तद्वह्य थीमहीत्यथ उच्यते॥ १०॥

सप्रभं सत्यसानन्दं हृदये मण्डलेऽपि च।

ध्यायञ्जपेत्तदित्येतान्निष्कामो मुच्यतेऽचिरात्॥११॥

(स यश्चायं पुरुषो यश्चासावादित्ये स एकः,इतिश्रुतेः)

भाषा ।

गायत्री और ब्रह्ममें भेद नहीं है, चाह जिस किसी प्रकारसे हो (वह) में हूँ, यह उपासना करे ॥ ९ ॥

उस प्रकाशमान सविताका वर्णन करने योग्य नेज जो अमारी बढ़िकी प्रेरणा करता है वह बद्ध है उसका में

हमारी बुद्धिकी प्रेरणा करता है वह ब्रह्म है उसका में ध्यान करता हूँ ऐसा कथन है ॥ १० ॥

प्रकाशसहित सन्यानन्द स्वरूप ब्रह्मको हृदयमें वा सूर्य-मण्डलमें ध्यान करता हुआ निष्काम गायबीका जप करे तो शीव अववन्धनसे खूट जाताहै ॥ ११ ॥

(सर्व भूतांके हदयमें जो आत्महत पुरुष है और जो सूर्यमण्डलमें परमात्महत पुरुष है वे दोनों एकहप हैं)

⁽१) व्यासः।

⁽२) विस्वामित्रः।

गायत्रीत्रह्मेक्यम् ।

संम्कृतम्।

(१) गायञ्यास्यं त्रह्म यायञ्यनुगतं गायत्री-सुखेनोक्तम्॥ १२॥

- (२) गायत्री प्रत्यस्त्रह्मेदचवोधिका ॥ १३ ॥
- (३) प्रणवटयाहृतिभ्याञ्च गायःया तृतयेन च।

उपास्यं परमं ब्रह्म आत्मा यत्र प्रतिष्टितः॥१४॥

(४) परब्रह्मस्वरूपा च निर्वाणपददायिनी ॥ ब्रह्मतेजोसयी शक्तिस्तद्धिष्टातृदेवता ॥ १५॥

भाषा ।

गायत्री नामक ब्रह्म गायत्रीमें व्यापक गायत्री नामसं वर्णित है ॥ १२ ॥

गायत्री जीवात्मा और ब्रह्मकी एकताका बाधकहै॥१३॥

प्रणव व्याहति और गायत्री इन तीनोंद्वारा परवहः उपासना करने योग्य है जिस ब्रह्ममें आत्मा स्थित है॥१४॥

ब्रह्मरूपा गायत्री मोक्षपद देनेवाली है और ब्रह्मतेज्मयी शक्ति है वह गायत्री मन्त्रकी अधिष्ठात्री देवता है॥१५॥

⁽१) छान्दोग्य । शंकरभाष्ये प ०३ खं ०१२ मं ०५।

⁽२) शहरभाष्ये।

⁽३) तारानाथकृतगा० व्या॰ पृ० २५।

⁽४) देवीभाग० स्कं० ९ अ० १ इलीक ४२।

गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः ।

संस्कृतम्।

- (१) ओङ्कारस्तत्परंत्रह्मसावित्रीस्यात्तदक्षरम्१६
- (२) गायत्री तु परं तत्त्वं गायत्री गतिः ॥ १७ ॥
 - (३) गत्यत्र्येव परो विष्णुर्गायत्र्येव परः शिवः॥
- गायन्येव परो ब्रह्मा गायन्येव त्रयी यतः ॥ १८॥
- (४) सर्वात्सना हि सा देवी सर्वभूतेषु संस्थिता॥ गायत्री सोक्षहेतुर्वे मोक्षस्थानमलक्षणम् ॥ १९॥

आषा ।

आङ्कार परत्रह्मरूप है और गायत्री भी नाश रहित ब्रह्म है॥ १६॥

गायत्री परमतन्व और परम गति हैं, । १०॥

गायत्री ही दूसरा विष्णु, दूसरा शिव और दूसरा ब्रह्मा क्योंकि गायत्री तीनों देनोंका स्वरूप है ॥ १८॥

वही गायत्री देवी सर्वात्मरूपसे सर्व भृतोंमें स्थित है और गायत्रीही मोक्षका कारण तथा अहप मुक्तिका स्थान है। १९॥

(१) दुर्भपुराणे उ० विभाव अव १४। इलीब ५५।

(२) वृहत्याराशर सं ० अ० ५। इन्हें।० ४।

(३) वृहत्मनध्यामाध्ये ।

(४) ऋषियङ्गः।

いっているとうないとうないできるからのできるから

कालभेदेन गायन्या नामानि।

संस्कृतम् ।

'(१) गायत्री नाम पूर्वाहे सावित्री सध्यसे दिने॥ सरस्वती च सायाहे सैव सन्ध्या त्रिषु रुषृता ॥१॥

भाषा।

प्रातःकालमें गायत्री, मध्याह्रमें सावित्री तथा सायङ्गलमें

सरस्वती नाम है वही गायत्री तीनों सन्ध्यामें वर्णित है॥१॥

गायत्रीनामार्थः ।

संस्कृतम् ।

- (२) तद्यद्रयाश्स्त्रायते तस्साद्रायत्री ॥ १ ॥
- (३) गायत्री गायतेः स्तुतिकर्मण इति ॥ २॥

भाषा ।

गायत्री जिस कारणसे प्राणोंकी रक्षा करती है तिस कारणसे उसका गायत्री नाम है ॥ १ ॥ गान और स्तुतिकर्ममें गायत्री नाम है ॥ २ ॥

(१) व्यासः ।

(२) बृहदारण्यकः ५।१४।४।

(३) निस्की नैपण्डुके काण्डे । १ अ० ३ पा० ३ ख० । कुनुस्क्रिकेट कर्किक क्रिकेट (१६) गायत्रीमन्त्रार्थभास्तरः ।

संस्कृतम् ।

- (१) प्रतिप्रहान्नदोषाच पातकादुपपातकात् ॥ गायत्री प्रोच्यते तस्साहायन्तं त्रायते यतः॥ २॥
- (२) स्रवितृद्योतनात्सैव सावित्री परिकीर्तिता॥ जगतः प्रसवितृत्वात् वाग्रूपत्वात्सरस्वती ॥ ४॥
- (३) गायञ्छिप्यान् यतस्त्रायेत्कायं प्राणांस्तथेव च । ततः स्मृतेयं गायत्री सावित्रीयं ततो यतः ॥

प्रकाशनात्सा सवितुर्वाग्रूपःवात्सरस्वती ॥ ५॥

भाषा ।

जिस कारणसे जप करनेवालेकी प्रतिष्रह, अन्नदोप, पातक और उपपातकींसे रक्षी करती है तिस कारणसे गायत्री कही जाती है॥३॥

प्रकाशकरनेंस और जगतके उत्पन्न करनेके कारण उसी गायत्रीका नाम सावित्री हुआ और वाणीरूप होनेसे

सरस्वती हुआ ॥ ४ ॥

जिसकारण जप करनेवालेके शरीर और प्राणकी रक्षा करती है तिसकारण गायत्री नाम है प्रकाश हानेसे सावित्री और वागरूप होनेसे सरस्वती नाम है ॥ ५ ॥

⁽१) व्यासः --याज्ञवल्क्यः।

⁽२) व्यासः ।

⁽३) अग्रिपुराणे अ० २१६ । ब्लो० १-२ ।

	\$\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\\
けばれ	वर्णाश्रमिणां गायत्रीमंत्रभेदः। (१७)
	संस्कृतस्।
	🤇 १) प्राणा गया इति प्रोक्ता त्रायते तानथापि वा ॥ 🖁
	(२) गयान् प्राणान् त्रायते सा गायत्री ॥ ६॥ 🛭 🖠
	(३) चतुर्विशस्यक्षराणां सत्त्वेन गायत्री छन्दस्कः
	तयापीयं गायत्रीत्यभिधीयते ॥ ७ ॥
Š	भाषा।
A C	प्राणका नाम गय है तिस प्राणकी रक्षा करनेके कारण
	गायत्री नाम हुआ ॥ जो 'गय' अर्थात्-प्राणेंकी रक्षा 🏅
	करती है वह गायची है ॥ ६॥
	चोबीस् अक्षरोंसे निर्मित होनेके कारण तथा गायत्री
	छम्द होनेके कारण गायत्री नाम है ॥ ७ ॥
	वणोश्रमिणां तन्मन्त्रसेदमाह ।
	संस्कृतम् ।
	(४) ओङ्कारव्याहृतिपूर्वां गायत्रीं त्राह्मणो जपेत् ।
	त्रिष्टुभञ्जैव राजन्यो जगतीं वैश्य एव च ॥ १ ॥
	भाषा ।
Ę	ओङ्कार और तीनों व्याहृति सहित गायत्री मंत्रको
	ब्राह्मण जपे। त्रिष्टुप्छन्द्वाला मंत्र क्षत्रिय और जगती
	छन्दवाला मंत्र वेश्य जपे ॥ १ ॥
	(१) भरद्वानः।
	(२) ऐतरेयत्रा०।
	(३) तारानाथ गा० व्या०। पृ० १६ पं० १५।
Ž.	(४) अपरार्के शाखाग्तरे मन्त्रनिरूपणखण्डे ।
¢	~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~~

(१८) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः ।

संस्कृतम् ।

यद्वा सर्वेऽपि गायत्रीं तत्राचो ब्रह्मसंज्ञिताम् । विड् वैष्णवीं नृपो रौद्रीं सर्वे वा ब्रह्मसंज्ञितास्॥२॥ भाषा ।

अथवा तीनों वर्ण गायत्रीछन्दवाला मंत्र जपें । तिनमें आदिवर्ण बाह्मण ब्रह्मगायत्री जपे । वैश्य विष्णुगायत्री, क्षत्रिय रुद्दगायत्री अथवा तीनों वर्ण ब्रह्मगायत्री जपें ॥२॥

ब्रह्मचारिगृहस्थयोः-

संस्कृतम्।

(१)ओङ्कारपूर्विकास्तिस्रो महाव्याहृतयोऽज्ययाः। ज्ञिपदा चैत्र सात्रित्री विज्ञेयं ब्रह्मणो सुखम्॥१॥

(२) जऐत्प्रणवपूर्वाभिट्याहृतिसः सदैव तु ।

तिसृभिर्भूः प्रसृतिभिर्गायत्रीं ब्रह्मरूपिणीस् ॥ २ ॥

भाषा ।

ओंकार पूर्वक तीनों अध्यय व्याहतियों सहित त्रिपदा गायत्री त्रह्मसुख जानने योग्य है ॥ १ ॥

प्रणव पर्वक तीनों व्याहृतियों (भृः अवः स्वः) सहित ब्रह्मस्पिणी गायत्रीको सदैव जपे ॥ २ ॥

⁽१) मनु० । अ०२ इत्रो०८१ ।

⁽२) लष्यास्यलायन० । ग्र० १ स्ली० ४५-४६ ।

ब्रह्मचारिगृहस्थयोर्मत्रभेदः। (१९)

संस्कृतम्।

(१) ओङ्कारमादितः कृत्वा व्याहृतीस्तद्नन्त्रम्।

ततोऽधीयीत सावित्रीमेकायः श्रद्धयान्वितः ॥ ३ ॥ (२) ओमित्येकाक्षरं ब्रह्मेत्येतदात्मायसुच्यते ।

गायत्र्यास्तत्पठित्वादौ जपकर्म समाचरेत्॥ १॥

(३) प्रणवव्याहृतियुतां गायत्रीं वै जपेत्ततः।

(१) तत्रैकप्रणवा कार्या गृहस्थैर्जपकर्मणि ॥ ५॥

भाषा

श्रद्धायुक्त एकाग्र चित्तसे आदिमें ओङ्कार, तदनन्तर सहाव्याहति, तत्पञ्चात् गायत्री (सावित्री) मन्त्रका जप करे ॥ ३ ॥

ॐ एकाक्षर ब्रह्म है और इसीको आत्मा कहते हैं इसीको गायत्रीके आदिमें कहकर जपै ॥ ४ ॥

इसके अनन्तर प्रणव ज्याहृति युक्त गायत्रीको नपै नपकर्ममें एक प्रणवयुक्त गायत्री गृहस्थको जप करना उचित है॥ ५॥

⁽१) क्म पु॰ उ॰ मा॰ अ॰ १४ वलो॰ ५२।

⁽२) शौनकः।

⁽३) व्यासः।

⁽४) वशिष्ठः।

संस्कृतम् । (१) गृहस्थवनु जप्तव्या सदेव ब्रह्मचारिभिः॥६॥ (२) गृहस्थो त्रह्मचारी च प्रणवाद्यामिमां जपेत्। अन्ते यः प्रणवङ्कुर्यान्नासौ वृद्धिमवाप्नुयात् ॥०॥ (३)ओङ्कारो व्याहृतीस्तिस्रः प्रथमं संप्रयोजयेत् । ओङ्काराद्यास्त्रिरावृत्य वेदस्यारम्भणे तथा ॥ ८॥ प्रणवाद्या तु विज्ञेया जपे व्याह्यतिभिः सह । प्रणवटयाहातिभिः सार्ह्धं स्वाहान्तं होसकर्मणि॥९॥ भाषा । ब्रह्मचारियोंको भी गृहस्थोंकी भांति गायत्री सदैव जपना चाहिये ॥ ६ ॥ गृहस्य और ब्रह्मचारी प्रणवको आदिमें कहके गायत्री जप जो अन्तमें प्रणयकी योजना करके जपते हैं वे रृद्धिको नहीं प्राप्त होतेहैं ॥ ७ ॥ ओंड्रार और तीनों व्याहतियोंकी प्रथम योजना करें। तथा वेदके आरम्भेमें ओङ्कारयुक्त गायत्री तीन वार जपे ॥ ८॥ जपमें प्रणवादि ब्याहृतियों सहित गायत्री जानना चाहिये । होम कर्ममें स्वाहाके अन्ततक प्रणव और ज्याहति सहित जपना चाहिये ॥ ९ ॥ (१) स्मृतिचिन्द्रकायाम् ।

(२) यो॰ याज्ञ॰ अ॰ ४।२६।

(३) यो० याज्ञ० अ० ४/३८,३९,४०, /

वानवस्थादीनां मंत्रभदः। とうからなからないないからないからないからないからないであるというななるなななななななななななななななななななないのできょうというないという वानप्रस्थादीनास्। संस्कृतम्। (१) ओङ्कारं पूर्वसुच्चार्य सूर्भुवः स्वस्तथैव च । गायत्री प्रणवश्चान्ते जपो ह्येवसुवाहृतः ॥ १ ॥ भाषा । ओङ्कारका उचारण करके फिर भूर्भुवः अनन्तर त्रिपदा गायत्री और अन्तमें आंङ्गर सहित गायत्रीका जप कहा गया है ॥ १ ॥ गायत्रीप्रणवसंयोगकरणे हेतुः। संस्कृतम् । (२) गायत्री प्रकृतिर्ज्ञेया ओङ्कारः पुरुषः स्मृतः । त्राभ्यासुभयसंयोगाजगत्सर्वं प्रवर्तते ॥ १ ॥ भाषा। गायबीको प्रकृति जानना चाहिये, ओङ्कार पुरुष कहा गया है, इन दोनोंके संयोगसे सब जगत होताह ॥ १॥ (१) वृ० यो० याज्ञ ।

(२) बृहद्योगियात्रवः। अ० ४।१०।

(२२) गायत्रीमन्त्रार्थभारकरः ।

(अ)गायत्रीमन्त्रः।

संस्कृतम्।

(१) ॐ सूर्श्ववः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि । धियो यो नः प्रचोदयात् ॥१॥

पदच्छेदः ।

ॐ भूः। भुवः। स्वः। तत्। सवितुः। वरेण्यध्। भर्गः। दे^{वस्य} । धीमहि । धियः । यः। नः। प्रचोदयात् ॥ १॥

अन्वयः।

सवितुः देवस्य यद्वरेण्यं भर्गः नः धियः प्रची-दयात् (प्रस्यति) तत् धीमहि । कीदृशं तत्,भूः

भुवः स्वः । पुनः कीदशम्, ओध् ॥ १ ॥

अथवा-सवितः देवस्य यद्वरेण्यं भर्गः धीसिहि, तत् नः धियः प्रचोद्यात् (प्रेर्येत्) कीदृशं तत्,

भूभुंवः स्वः । पुनः कीदृशम्, ओम् ॥ २ ॥

(अ) मंत्रामननात् (निरु देव अ अव ३ पाव ६ खः) मननात्त्वरुपस्य मितदेवस्य तेनुसः।

त्रायते सर्वभरतस्तरमान्मंत्र इतीरितः ॥ (कलार्णवतन्त्रे १ ०११ अर्थसम्बद्धकगान्यवीभाष्य ५० २४)

(१) ऋ० वे० अष्ट० ३ अ० ४व०१०मं०३अ०५म्०६२मन्त्रेर०; गुक्क्यवुर्वेदं अ० ३ । मं० २५ ।

कृष्ण्यजुर्वेद कां० १ अ० । प्र०५ । अनु०६ ।

सामवेद उत्तर अ०१३ सं१ ४ अ०६ अ०३स्०९ऋ०१

प्रणवनहत्त्वम् । यहा-यः (लिविता) नः धियः प्रचोदयात् (प्रेरयति) तत्, तस्य सिन्तुः देवस्य वरेण्यं भर्नः धीमहि, तस्कीदशम्-भूर्भुवः स्वः, पुनः कीदश्यः, ओस्॥३॥ इति (याज्ञयस्यत्रभारद्वाजानस्यकृतसाध्यान<u>ुसार</u>ण एर्योजना कृता) प्रणवसहत्त्रस् संस्कृतम्। (१) ओङ्कारस्तु परंत्रह्म गायत्री स्थात्तदक्षरम् । एवं सन्त्रो महायोगः साक्षात्सार उदाहृतः॥ १॥ (२) अकारं चाप्युकारं च सकारं च प्रजापतिः। वेदत्रयात्रिरदुहद् भृर्भुवः स्वारितीति च ॥ २ ॥ भाषा। ओंकार परब्रह्म है और गायबी उसका अक्षर है इसप्रकार यह मन्त्र महायाग और साक्षात् सार कहा गया है ॥ १॥ अकार उकार मकार और भृर्भुवः स्वः को ब्रह्मान तीनों वदांस सारहप प्रकट किया है ॥ २ ॥

(१) आंश्चनसम्मृती ३।५२ । (२) मनुऽ । अ०२।७६ । २४) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः ।

संस्कृतम् ।

(१) सारभूताइच वेदानां गुद्योपनिषदः स्मृताः । ताभ्यस्सारं तु गायत्री गायत्र्या ज्याह्वतित्रयम्॥३॥

व्याहृतिभ्यस्तथोङ्कारस्त्रिवृद्ब्रह्म स् उच्यते । त्रिवृद्ब्रह्मणि निष्णातः परं ब्रह्माधिगच्छति ॥ ४॥

ओङ्कारः परमं ब्रह्म सर्वमन्त्रेषु नायकः । प्रजापतेर्भुखोत्पन्नः तपःसिद्धस्य वै पुरा ॥ ५ ॥

भाषा ।

वेदोंका सार गुद्ध उपनिषद्कहे गये हैं तिनका सार गायत्री, गायत्रीका सार तीनों व्याहात हैं ॥ ३ ॥

तीनों व्याहतियोंका सार ओंकार कहा गया है, ओंकारको त्रिमात्र त्रह्म कहते हैं, त्रिमात्र ब्रह्ममें जो मन रहताहै वह परब्रह्मको प्राप्त होता है ॥ ४ ॥

ओंकार परत्रहा है और सब मन्त्रोंमें श्रेष्ठ है, आदिमें तपसे सिद्ध हुए ब्रह्मांक मुखसे प्रकट हुआ है ॥ ५ ॥

⁽१) वृ० यो० याज्ञ० अ० ४। ७८-७९ अ० २।२-३।

प्रणवस्य ब्रह्मचोधकःवम् । प्रणवस्य वसवीधकत्वम्। संस्कृतम् । (१) ओिमति ब्रह्म॥१॥ स ओमित्येतदक्षरमपरयद्विवर्णं चतुर्सात्रम् । सर्वज्यापि सर्वविभवयातयास ब्रह्म ॥ २ ॥ (२) हंसप्रणवयोरभेद इति ॥ ३ ॥ (३) प्रणवहंसः परब्रह्मेति ॥ ४॥ (४) परञ्चापरञ्च ब्रह्म यदोङ्कारः (५) ओङ्कार एवेद ७ सर्वम् ॥ ६ ॥ भाषा। ओंकार ब्रह्म है ॥ १ ॥ ब्रह्माने ओम् इस अक्षरको देखा जो दोवर्ण और चार मात्रावाला सर्वव्यापी नाज्ञरहित ब्रह्म है ॥ २ ॥ हंस (परमात्मा) और प्रणव (ॐ) में भेद नहीं है ॥३॥ प्रणय और हंस ये दोनों परब्रह्म हैं ॥ ४ ॥ ओंकार निर्गुण और सगुण ब्रह्म है ॥ ५ ॥ यह सर्व सृष्टि ओंकारहर ही है ॥ ६ ॥ (१) तिसिरीयोप । अ० १।८-गोपथब्राह्मण पूर्वभा ० प्रव १ ब्रा ० १६ (२) पाशुपतत्रह्योप ० (३) परव्रह्मोप ०

(४) प्रस्त० ५।२ (५) छान्दो० २।२३।३

7967777444444

(२६) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः ।

संस्कृतय् ।

(१) भृतस्भवज्ञविष्यति सर्वमोङ्कार एव यचा-न्यत्त्रिकालातीतं तद्योङ्कार एव सोऽयमात्साऽध्य-क्षरमोकारोऽधिमात्रम् । ओभित्येतदक्षरमिद्धं सर्वम्॥ ७॥

(२) यदसूर्तं तत्सत्यं तद्व्रह्म यद्व्रह्म तड्ज्यो-तिर्यज्ज्योतिः स आदित्यः स वा एव ओमित्येत-दारमाप्यऽभवत् ॥ ८॥

(३) ओं तस्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः ॥९॥

भाषा ।

भृत, वर्रामान और भविष्य सब ओंकारहप है। तथा जो कुछ तीनों कारुंस परे हैं निश्चय करके सो भी ओंकार हप है वह ओंकार यह आत्मा है-१ अध्यक्षर नाशरहित तथा अधिमाना यह सर्व सृष्टि ओंकारहप है ॥ ७ ॥ जो हपरहित हैं वह सत्य है वही ब्रह्मा है, जो ब्रह्म है

वह प्रकाशस्त्रहर है, जो प्रकाशस्त्रहर है वह सूर्य है, वहीं सूर्य ॐकार है वहीं आत्मा है ॥ ८ ॥

ॐतःसत् यह ब्रह्मका तीन प्रकारका नाम कहा गया हे९॥

- (१) माण्ड्स्य । शु० १;८;१
- (२) भैश्युपनिपादि ० ६।३.।
- (३) भगवद्गीतायाम् । अ०१७।२३।

(२८) गायबीमन्त्रार्थभास्करः ।

संस्कृतम्।

(१) यदोङ्कारमकृत्त्रा किञ्चिदारभ्यते तद्द-ज्रीभवति । तस्माद्वज्रभयाद्गीतमोंकारं पूर्वमारभे-दिति ॥ २॥

भाषा।

ओंकारका उचारण न करके जो कुछ (श्रीतादि) कार्य आरम्भ किया जाता है वह वज्रवत होजाता है अर्थात् निष्फल होजाता है। तिसकारण वज्रके भयसे डर ॐकारके उचारण पूर्वक कार्यको आरम्भ करे ॥ २ ॥

प्रणवदासानि।

संस्कृतम् ।

(२) ओङ्कारं प्रणवश्चेव सर्वव्यापिनसेव च। अनन्तं च तथा तारं शुक्लं वैद्युतसेव च॥ हंस तुर्यं परब्रह्म इति नामानि जानत ॥१॥

भाषा।

ओंकार, प्रणव, सर्वत्र्यापी, अनन्त, तार, ग्रुक्क, विग्रुत, हंस, तुर्य, परत्रह्म इन ओङ्कार नामोंको जानो ॥ १॥

(१) छान्दोग्यपारे०।

(२) वृ० यो० याज्ञ० अ०। २।११६-११७।

पदार्थाः-ओ३स्।

संस्कृतम्।

(१) आष्ट्रर्घातुरवितसप्येके रूपसासान्यादर्थ-सामान्यक्नेदीयस्तस्मादापेरोङ्कारः सर्वमामोती-त्यर्थः॥१॥

(.२) अव-रक्षाप्रकाशपालनहिंसावृद्ध्यादिषु अवति चतुर्दशभुवनानीत्योम् ॥२॥

भाषा।

आप्त व्याप्ती अव रक्षणे इन दोनों धातुओंका रूप सामान्य कथन किया है इससे अर्थ सामान्य है तिससे आप्त धातुसे ॐकार सर्वव्यापी है ॥ १ ॥

अव-थातु, रक्षा-प्रकाश-पालन हिंसा-रृद्धि आदि अर्थमें है। चतुर्दश भुवनके रक्षा करनेके कारण ॐकार नाम हुआ ॥ २ ॥

⁽१) गोषथबा० पृ० भा० प्र०१ बा० २६।

⁽२) विण्णुस० भा० [शब्दकल्पद्रुगकोशे च]

संस्कृतम् ।

(१) अवित संसारसागरादिति ओ३म्। अवतेष्ठिलोपश्चेत्यौणादिकसूत्रेण मन्प्रत्ययः। मन्प्रत्ययस्य टिलोपः। ज्वरत्वरेत्यादिनोठ्, ततो गुणः ततः दिलष्टोचारणमिति प्रक्रियया ओ३म्, इति निष्पन्नम्॥३॥

(२) प्र-णु-स्तुतौ,प्रकर्षेण नूयते स्तूयतें आत्मा स्वेष्टदेवता अनेनेति प्रणवः ॥ ४॥

भाषा।

संसारसागरसे रक्षा करता है इससे ॐ नाम हुआ.। अव धातुसे ''अवनेष्टिलोपश्च''— इस उणादि सूत्रसे मन् प्रत्यय होने पर और मन्प्रत्ययंके टिलोप करने पर (ज्वरत्वर०) इत्यादि सूत्रसे ऊठ् करनेसे तदनन्तर ग्रण करने पर मिला-करके उन्चारण करनेसे ॐ नाम सिद्ध हुआ ॥ ३॥

प्र-उपसर्ग पूर्वक 'णु' धातु स्तुति अर्थमें है। अञ्छी तरहसे स्तुति कीजाय आत्मा स्वेष्टं देवताकी जिस-करके वह प्रणव है॥ ४॥

⁽१) बृहत्सं० भा०।

⁽२) विष्णु स० मा०।

पदार्थाः-ओं ३म् ।

(३१)

संस्कृतस् ।

(१) अकाररचाप्युकाररचमकारश्चाक्षरत्रयम्॥ ब्रह्म विष्णुश्च रुद्रश्च त्रिदेवत्य उदाहृतः॥ ५॥

(२) प्रणवो हि परन्तत्त्वं त्रिवेदं त्रिगुणा-त्सकम्॥ त्रिवेदत्वं त्रिधासं च त्रिप्रज्ञं त्रिरवास्थि-तम् ॥६॥

्त्रिसानं च त्रिकाळं च त्रिलिङ्गं कवयो विदुः॥ सर्वसेतत्रिरूपेण व्याप्तं तु प्रणवेन तु ॥ ७॥

भाषा ।

अकार, उकार, मकार यह तीनों अक्षर ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र त्रिदेवता कहे गये हैं ॥ ५ ॥

निश्चय करके प्रणव परमतत्त्व तीन वेद और तीन गुण रूप है। तथा तीन थाम तीन प्रज्ञा तीन अवस्था रूप है ॥६॥

तीन प्रमाण तीन काल और तीन रूप कवि लोग जानसे हैं। यह सर्व सृष्टि विराद हिरण्यगर्भ ईश्वररूप प्रणवसे परिपूर्ण है॥ ७॥

⁽१) वृ० यो० याज्ञवल्क्य०। अ० २।१९-२०।

⁽२) वृ० पाराश्चर सं० (षद्कर्माणि स्वरूपवर्णनम्) अ० ४। स्त्रो० १०-११।

A STATE OF THE STA मात्राभेदाः । (१) अ १ म ३ अर्द्धमात्रा ४ रका किपला कृष्णा गुद्धस्फटिकसन्निभा अथर्वण: ऋकू यजुः साम भू: भुवः स्वः महाज्याहृतयः गायञ्यम् त्रिष्टुभम् जागतम् अनुष्टुभम् भूमिलोकः अंतरिक्षलोकः सुरलोकः परलोकः सर्वेदैवस्या आप्रः आदित्यः वायुः निर्गुणः रजः सत्त्वम् तमः निराकारः विष्णुः बह्या शिवः विराट् हिरण्यगर्भः ईश्वर: बस विश्वः तैजसः प्राज्ञ: कूटस्थः बहिःप्रज्ञः अन्तःप्रज्ञः त्रिप्रज्ञरहित**ः** घनप्रज्ञ: स्थुलशरीरम् सूक्ष्मशरीरम् कारणशरीरम् अशरीरम् मुषुप्तिः जाग्रत् स्वप्रः तुरीया मनआदि १४ अन्तः करणं ४ चित्तम् करणरहितम् ज्योतिरध्यात्मम् वाचमध्या ॰ प्राणमध्या ॰ मनअध्या० स्थूलभुक् सूक्ष्मभुक् भोगरहितः आनन्द्रभुक् ब्रह्मचर्यः वानप्रस्थः संन्यासः गृहस्थ: धर्मः अर्थः मोक्षः कामः ब्रह्मलोक-विष्णुलोक-शिवलोक-अनामयपद-प्राप्तिः प्राप्तिः -माप्तिः माप्तिः

⁽१) गोपथबा व ब्रह्मविद्योप । अथर्वशिखोप व वृत्र यो व याज्ञ व वृत्र पाराश्चर० गायत्रीनिर्वाणशिवरहस्ये ।

सेदेप्वरत्यादीनी व्याङ

संस्हातम् ।

अप्तिः=अञ्चु गंतिपूजनयोः-गतेख्रयोऽर्थाः <mark>ज्ञानं</mark> गसनं प्राप्तिश्चेति-पूजनं सत्कारः । अञ्चति अर्च्यते वा सोयमग्निः॥१॥

ः वायुः=वा गतिगन्धनयोः – गन्धनं हिंलनम्,

वाति लोऽयं वायुः चराचरं जगद्धारयति वा स

वायुः ॥ २ ॥

आदित्यः=दोऽवखण्डने-अवखण्डनं विनाशः। चित नश्यतीति व्युत्पत्त्या दित्यः न दित्यः अदि-

त्यः अदित्य एवादित्यः ॥ ३ ॥

भाषा।

(अप्तिः) 'अञ्चु' थातु गति पूजन अर्थमें है, और गतिके ज्ञान, गमन, प्राप्ति ये तीन अर्थ हैं, पूजन सत्कार है।

सर्वत्र जात्त राज्यात स्थात प्रतास अथ हे, रूजन सत्कार है। स्थान जा व्यात है अथवा सबसे प्रजित है वह अग्नि है।। १॥

(वायुः) 'वा' धातु गति गन्धन अर्थमें है, गन्धन कहते हैं हिसनको, चलै जो अथवा चराचर जगतको प्राणस्वसे

धारण करे वह वायु है। वायु परमेश्वर है॥ २॥ (आदित्यः) दो' धातु 'अवखण्डन' अर्थमें है। अव खण्डन विनासको कहते हैं। जो नाज हो वह दिस्स है और

खण्डन विनाशको कहते हैं। जो नाश हो वह दिखा है और जिसका नाश न हो वह अदित्य है और वहीं आदित्य है ॥३॥

উপ্লেক্তৰ ক্ষেত্ৰক ক

संस्कृतम् ।

ब्रह्मा=बृह वृहि वृद्धौ, बृहयति वर्द्धयति जगत् इति ब्रह्मा ॥ ४ ॥

विष्णु=विष्तु व्याप्तौ, वेवेष्टि व्याप्तोति चराचरं जगत् स विष्णुः ॥ ५ ॥

शिवः=शिङ् शयने-शेते चराचरं जगदस्मिन् स शिवः ॥ ६॥

निराकारः≔नास्त्याकारो यस्य स निराकारः।७। विराट्="राजृ दीत्तौ"–विविधं चराचरं जगत् राजते प्रकाशते स विराट् ॥ ८॥

आषा।

(ब्रह्मा) 'वृह' 'वृहि' का अर्थ दृद्धि हैं जो संसारको बढावे उसे ब्रह्मा कहते हैं । और स्वयं वृहत् और परिपूर्ण हो उसे भी ब्रह्मा कहते हैं ॥ ४ ॥

(विष्णुः) 'विष्लुः' धातुका अर्थ व्याप्त है जो चराचर जगत्में व्याप्त हो वह विष्णु है ॥ ५ ॥

(शिवः) 'शी' धातुका शयन अर्थ होता है, चराचर जगत जिसमें सोवे उसे शिव कहते हैं ॥ ६ ॥

(निराकारः) जिसका स्वरूप नहीं है वह निराकार है॥७॥

(विराद्) राजृ धातु प्रकाश अर्थमें है जो नानाप्रकारके चराचर जगतको प्रकाशित करै वह विराद् है ॥ ८ ॥

मात्राभेदेप्वरन्यादीनां व्याख्याः। (३५)

संस्कृतम् ।

हिरण्यगर्भः=हिरण्यं तेजसो नास, हिरण्यानि सूर्योदीनि तेजांसि गर्भे यस्य स हिरण्यगर्भः—वा हिरण्यानां सूर्योदीनां तेजसां गर्भः हिरण्यगर्भः (ज्योतिर्वे हिरण्यम्—शतपथव्रा०)=हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत् (यजुर्वेद)॥९॥

ईश्वरः=ईश ऐश्वर्यं,−ईष्टे ऐश्वर्यं करोति असौ ईश्वरः सर्वेश्वर्यवानिति ॥ १०॥

AND THE PROPERTY OF THE PROPER

भाषा ।

(हिरण्यगर्भः) हिरण्य तेजका नाम है। प्रकाशरूप सूर्यादि तेज जिसमें व्याप्त है वह हिरण्यगर्भ है। अथवा सूर्यादिक तेजोंका उत्पत्तिस्थान हिरण्यगर्भ है। ज्योति ही निश्चय करके हिरण्य है ऐसा शतपथ बाह्मणका वचन है। हिरण्यगर्भ प्रथम हुआ जिससे भूतोंकी उत्पत्ति हुई। वहीं एक पति था, यह यज्जेंदका वचन है॥ ९॥

(ईश्वरः) 'ईश' घातु ऐश्वर्य अर्थमें है । जो अपने ऐश्वर्यसे सबका पालन करे वह ईश्वर है, अथवा जो सर्व ऐश्वर्यवाला है ॥ १०॥

(३६) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः।

ジャンシャンシャンシャンシャンシ

संस्कृतम् ।

विश्वः=विश प्रवेशने-विशन्ति सर्वाणि सूतानि आकाशादीनि यस्मिन् स विश्वः (वा) विशति व्यष्टि स्थूलशरीरं प्राप्नोतीति विश्वः ॥ ११ ॥

तैजसः=तिज निशाने, निशानं सूक्ष्मिकरणम्, तेजिस सूक्ष्मवासनामयप्रज्ञायामाश्रयत्वेन वर्त-मान इति तैजसः, वा सूर्यादीनां प्रकाशत्वा-दिति॥ १२॥

भाषा ।

(विश्वः) 'विश्व' प्रवेशन अर्थमें है। प्रवेश हो सम्पूर्ण भूत आकाशादि जिसमें वह विश्व है, व्यष्टि स्थूल शरीरमें जो परिपूर्ण है वह विश्व है॥ ११॥

(तैजसः) 'तिज' निशान अर्थमें है। निशान सूक्ष्म कर-नेको कहते हैं। सूक्ष्म वासनामय बुद्धिमें आश्रय करके जो साक्षी रूपसे वर्त्तमान है वह तैजस है, अथवा सूर्य्यादिकोंका प्रकाशक होनेसे तैजस नाम है॥ १२॥

नात्राभेदेष्वग्न्यादीनां व्याख्याः । (३७)

संस्कृतस् ।

प्राज्ञः=ज्ञा अववोधने-जानातीति ज्ञः, प्रकृष्ट-श्वासौ ज्ञश्च प्रज्ञः (वा) प्रकृष्टे स्वप्रकाशात्मानि ज्ञानं ज्ञतिरज्ञानवृत्त्यात्मको वोधो यस्य सः प्रज्ञः (वा) प्रजानाति चराचरं जगत् स प्रज्ञः, प्रज्ञ एव प्राज्ञः ॥ १३॥

ंकूटस्थः=कूटे सायाकार्यविकारे आकाशवित-ष्टतीति कृटस्थः। (कूटस्थोऽक्षर उच्यते। गी०अ० १५।१६)॥ १४॥

भाषा ।

(प्राज्ञः) 'ज्ञा' थातु अवबोधन अर्थमें है, अच्छी तरहसे जो जाने उसका नाम प्रज्ञ है, अथवा स्वप्रकाशात्मामें अज्ञानरूप दित्तका जिसको बोध है वह प्रज्ञ है, अथवा चराचर जगतको जो जानता है वह प्रज्ञ है। प्रज्ञ ही प्राज्ञ है॥ १३॥

(कूटस्थः)कूट अर्थात् मायाकेकार्यके विकारमें आकाश की तरह जो स्थित है वह कूटस्थ है। कूटस्थको अक्षर (नाश रहित)कहते हैं (गीता अध्याय १५।१६)॥ १४॥ (३८) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः।

प्रकारान्तरेण मात्रार्थाः ।

संस्कृतम् ।

(१) समष्टिन्यष्टिस्थूलप्रपञ्चोपहितचैतन्य-मकारार्थः,तत्स्थूलप्रपञ्चांशपरित्यागेन केवलचैत-न्यसात्रमकारेण लक्ष्यते ॥१॥

तथा सप्तिष्टिच्यष्टिसृक्ष्मप्रपंचोपहितं चैतन्य-सुकारार्थः । तत्सूक्ष्मप्रपंचांशपरित्यागेन केवल-चैतन्यमात्रसुकारेण लक्ष्यते॥ २॥

भाषा ।

समिष्ट व्यष्टि स्थूल प्रपञ्चोपहित चैतन्य अकारका वाच्यार्थ हे तिस स्थूल प्रपञ्चहप अंशक परित्यागसे जो केवल चैतन्यमात्र रहता है वह अकारसे लक्षित होताहै ॥१॥

तथा समिष्टि व्यष्टि मृह्म प्रपञ्चापहित चेतन्य उकारका बाच्यार्थ है तिस मृह्म प्रपंच अंशके परित्यागसे जो केवल चेतन्य शेष है वह उकारका लक्ष्यार्थ है ॥ २ ॥

(१) शिवरहस्यभा ।

संस्कृतम्।

तथा समष्टिव्यष्टिस्थूलसूक्ष्मव्रपंचद्वयका-रणभूतमायोपहितचैतन्यं मकारार्थः । तादशमा-यांशपरित्यागेन केवलचैतन्यमात्रं सकारेण लक्ष्यते ॥ ३॥

एवं तुरीयत्वसर्वानुगतत्वोपहितं चैतन्यमर्छमा-त्रार्थः, तदुपाधिपरित्यागेनार्छमात्रया चैतन्यमात्रं लक्ष्यते । एवं चतुर्णां समानाधिकरणपादभेदबोधे परिपूर्णमद्वितीयं चैतन्यमात्रमेव सर्वद्वैतोपमर्देन सिद्धं भवति ॥ ४ ॥

भाषा ।

तथा समिष्टि व्यष्टि स्थूल सूक्ष्म दोनों प्रपञ्चोंका कारण जो माया उपहित वैतन्य है वह मकारका वाच्यार्थ है। इसी प्रकार मायारूप अंशके परित्यागसे केवल वैतन्यमात्र मकारका लक्ष्यार्थ है॥ ३॥

इसी प्रकार तुरीय सर्वमें अनुगत व्यापक उपहित वैतन्य अर्धमात्राका वाच्यार्थ है तिस उपाधिके परित्यागसे अर्धमात्राका जो वैतन्य मात्र शेष रहता है वह अर्धमा-त्राका लक्ष्यार्थ है। इसी प्रकार चारों समानाधिकरण पाद (चरण) के भेदको जाननेसे परिपूर्ण अद्वितीय वैतन्य-मात्र सर्वद्वैतभावके मर्दनसे सिद्ध होता है॥ ४॥

गायवीमन्त्रार्थभास्करः । व्याहृत्यर्थः। संस्कृतम् । (१) त्रिशेपेण आहृतिः सर्वविराजः प्राह्वानं प्रकाशीकरणं व्याहृतिः॥ १॥ (२) मृर्भुवःसुवर्त्रह्म। भूर्भुवः सुवराप ओम्।२। (३) ब्रह्मसत्ताव्यतिरेकेण भूलोंकादिप्रपंचस्य पृथक्सक्ताऽनङ्गीकारात्तद्वुद्धेव ॥ ३ ॥ भाषा । विशेषरूपसे आहति अर्थात् सर्वविराट्का वीध अर्थात् प्रकाश करनेसे व्याहति हुआ ॥ १ ॥ भूर्सुवः स्वः ब्रह्मरूप है, तथा भूर्भुवः स्वः और जल ओंकाररूप है ॥ २ ॥ ब्रह्मसत्ताके विना भृत्येंकादिक प्रपंचकी पृथक् सत्ताका अङ्गीकार न करनेसे वह निश्चय करके ब्रह्म है ॥ ३॥

(१) বিজ্যুর৹ মা৹ ∤

(२) महानारा० ८११॥१४।१। (३) निर्णयकत्त्रवस्याक्यसं० भा०। व्याहत्यर्थः ।

(88)

म्रहत्स् ।

- (१) भृभुवस्त्वस्तथा पूर्व स्वयसेव स्वय-स्भुवा। व्याहृता ज्ञानदेहेन तेन व्याहृतयः स्मृताः॥ ४॥
- (२) प्रधानं पुरुषः कास्ठो ब्रह्मविष्णुसहेदवराः । सन्दं रजस्तमस्तिम्तः क्रमाद्रबाह्नतयः स्पृताः॥५॥

सृ:।

(३) भवतेः क्विपि सृरिति रूपम् ॥ १॥

भाषा।

सृष्टिसे पूर्व स्वयं ब्रह्माने ज्ञानदेहसे अर्धुवः स्वः कहा है तिस कारणसे व्याहतियां कही जाती हैं ॥ ४ ॥

प्रधान, पुरुप, काल, ब्रह्मा, विष्णु, रुद्र, सत्त्व, रज, तम तीनों कमसे व्याहतियाँ कही गयी हैं ॥ ५ ॥

्रभू:='भू' धातुसे किए प्रत्यय करनेसे 'भू:' ऐसा रूप होता है ॥ १ ॥

いるとうないないないできることできないというないとのなるなるなる

⁽१) यो॰ याज्ञ॰ । अ॰ ३। इलो॰ ९।

⁽२) कूर्मपुराणे । उत्तरविभागे । अ० १४ । व्लो० ५४ ।

⁽३) बहुचसन्ध्यापद्धतिमा० पृ० ८।

) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः ।

संस्कृतम् ।

(१) भवतीति भृः सर्वेपामुत्पत्तिस्थानं लिङ्ग-स्थानं पातालादिसप्तभुवनसहितो भूलींकश्च ॥२॥

(२) सवन्ति चास्मिन्सूतानि स्थावराणि चराणि च । तस्माद्रूरिति विज्ञेया प्रथसा व्याहः-तिस्तु या ॥ ३ ॥

(३) श्रूरिति वै प्राणः। प्राणयति जीवयति सर्वान् प्राणिनः सः। (स उ प्राणस्य प्राण इति-श्रुतेः) प्राण ईश्वर एव ॥ ४॥

भाषा ।

भवतीति भूः (पृथिवी) जो सर्वके उत्पत्तिका स्थान है लिङ्गस्थान पातालादि सप्त भुवन सहित भूलोक है ॥२॥

जिसमें चराचर भूत उत्पन्न होते हैं तिसकारणसे भू:-

प्रथम व्याहति कही गई है ॥ ३ ॥

भू: यह निश्चय करके प्राण है। सम्पूर्ण प्राणियोंको जो जिलाव उसे प्राण कहते हैं। प्राण ही ईश्वर है (श्वित)

(वह ईश्वर प्राणका भी प्राण है) ॥ ४ ॥

⁽१) विणुस० भाः।

⁽२) वृ० यो० याज्ञ०। अ० ३।१६-१७। (३) तेत्तिरीयोप० (शीक्षाध्याये) अनु० ५ मं० ३।

संस्कृतन्।

- (१) भूरिति वा अग्निः। (अत्राग्निरूप ईव्वर एव)॥ ५॥
- (२) भवति- अस्तीति सदिति व्युत्पत्त्या भूरिति सन्मात्रसुच्यते॥६॥

खुवः।

- (३) भावयति स्थापयति विद्वसिति भुवः॥ १॥
- (४) भवन्ति भूयो भूतानि उपभोगक्षये पुनः। कल्पान्ते उपभोगाय भुवस्तेन प्रकीर्तितम् ॥ २॥

भाषा ।

अथवा भूः यह अग्नि है और अग्नि ही ईश्वर है ॥ ५ ॥ भूः अर्थ जो तीनों कालमें रहे, तीनों कालमें रहनेसे सत् परमात्मारूप है ॥ ६ ॥

विश्वका जो स्थापन करै वह भुवः है ॥ १ ॥ कल्पान्तमें भोगके क्षयंके पश्चात् फिर उपभोगके छिये उत्पन्न होते हैं इस कारणसे भुवः कहा गया है ॥ २ ॥

(१) तैत्तिरीयोप० (शीक्षाध्याये) अनु० ५ मं० २।

- (२) शङ्करमा० ।-
- (३) सायनभा०।

(४) वृ० यो० याञ्च० अ० ३।१७--१८।

संस्कृतम् ।

(१) भुवरिति सर्वं भावयति प्रकाशयतीति व्युत्पत्त्या चिद्रूपसुच्यते ॥ ३ ॥

(२) भुव इत्यपानः, अपानयति दूरीकरोति सर्वं दुःखं सुमुक्षूणां मुक्तानां खसेवकानां धर्मा-त्मनां यः सोऽपानो दयालुरीइवरः ॥ ४ ॥

(३) भुव इति वायुः। वायुरूप ईश्वरः ॥५॥

स्वः।

(४) सुष्ठु अवति प्राप्नुवते, इति स्वः ॥ १ ॥ भाषा ।

भुवः यह सर्वको प्रकाश करता है, इस व्युत्पत्तिसे चैत-न्यरूप कहा जाता है ॥ १ ॥

भ्रुवः अपान वायु है जो सुमुक्षुवों, जीवन्सुक्तों, अपने सेवकों और धर्मात्माओंके सर्व दुःखोंको दूर करता है वह अपानवायुक्तप दयाछु ईश्वर है ॥ ४ ॥

भुवः यह वायुक्तप है वायु ही ईश्वर है ॥ ५ ॥

'अवति' का अर्थ परिपूर्ण है, अली प्रकार परिपूर्ण होनेसे स्वः कहा जाता है ॥ १ ॥

⁽१) बङ्करमाध्ये।

⁽२) तैत्तिरीयोप० शीक्षाध्याये अनु० ५ मं ः ३।

⁽३) तैत्तिरीयोप० शीक्षाध्याये अनु० ५ सं० २

⁽४) सायनमा ०

संस्कृतम्।

- (१) स्वर्यन्ते उचार्यन्ते प्रकटीसवन्ति देह-देवता यतः तत् स्वः त्रयद्विंशक्कोटिदेवतालयः स्वर्लोक इति ॥ २ ॥
 - (२) सुवरित्यादित्यः। आदित्यरूपेइवरः॥ ३॥
- (३) शीतोष्णवृष्टितेजांसि जायन्ते तानि वै ततः । आलयस्सुकृतीनां च स्वलींकस्स उदा-हृतः॥ ४॥

भाषा ।

स्वर्यन्ते-देहके देवता जिससे प्रकट हों उसको स्वः कहते हैं अर्थात् तैंतीस कोटि देवताओंका स्थान स्वर्ग-लोक है ॥ २ ॥

मुनः यह आदित्य है आदित्य ही ईश्वर है ॥ ३ ॥ शीत, उष्ण, वृष्टि, तेज, जिससे उत्पन्न होते हैं वह पुण्यात्मा पुरुषोंका स्थान स्वर्गलोक कहा जाता है ॥ ४ ॥

⁽१) विष्णुस॰ भा॰।

⁽२) तैत्तिरीयोप० श्रीक्षाध्याये अनु० ५ मं० २।

⁽३) बृ० यो० याज्ञ० अ० ३।१८-१९।

(४६) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः ।

संस्कृतम् ।

(१) स्वःशब्दो हि सुखवाची प्रसिद्धः। तदुक्तस्-पूर्णो भृतिवरोऽनन्तस्खो यद्द्रवाहृती-रितः॥ ५॥

(२) स्वरिति व्युत्पत्त्या सुष्टु सेवेंकियमाणसुख-स्वरूपसुच्यते ॥ ६ ॥

(३) सुत्ररिति व्यानः – व्यानयति चेष्टयति त्राणादिसकलं जगदभिव्याप्य स व्यानः सर्वाधि-ष्टानं वृहद्भुह्म ॥ ७ ॥

भाषा ।

स्वः शब्द सुखवाची प्रसिद्ध है यह कहा है। पूर्ण ऐश्वर्यश्रेष्ठ अनन्तसुख जिससे हैं। वह स्वः व्याहति है ॥५॥

स्वः इस व्युत्पत्तिसे सुष्टु सर्वेसे कथित सुलस्वरूप कहा जाता है ॥ ६ ॥

स्वः यह व्यान बायु है, जो जगतमें व्यापक होकर प्राणादि सर्वका चेष्टा कराता है वह व्यान वायु सबका अधिष्ठान व्यापक ब्रह्म है ॥ ७ ॥

⁽१) बह्नचसन्ध्यामा० १०९।

⁽२) शाहरमा०।

⁽३) तीत्तरीयभा० शीक्षाःयाये अनु० ५ मं ३ ।

गांयव्यर्थः ।

(১৯৫)

मायन्यर्थः ।

तत्।

संस्कृतम्।

(१) तदिति अञ्चयं परोक्षार्थं ॥१॥

(२) तदिति लुप्तषष्टयन्तं सर्गो विदोषणं

वा॥२॥

(३) तच्छव्दः स्ववुद्धिसेदक्ततः अतिदूरत-सेऽस्मुत्कर्पाख्येऽथें वर्तते ॥३॥

(४) तच्छन्देन प्रत्यग्भूतं स्वतस्तिखं परं ब्रह्मोच्यते ॥ ४ ॥

सादा ।

तत् यह अन्यय परोक्ष अर्थमें है अर्थात् जो दिखलाई न दे॥ १॥

तत् यह लप्तपष्ठचन्त है वा भगशब्दका विशेषण है॥२॥ तत् शब्द अपनी अपनी बुद्धिके भेदसे अति दूर अति उत्कर्ष (अति श्रेष्ठ) अर्थमें वर्तमान है ॥ ३॥

तत् शब्दसे आत्मरूप स्वतस्सिद्ध परब्रह्म कहा जाता है ॥ ४ ॥

⁽१) सन्ध्याभा०।

⁽२) तारा०।

⁽३) विष्णु० भा।।

⁽४) शाङ्करभा०।

(४८) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः।

संस्कृतम् ।

- (१) तत्, तस्य सर्वासु श्रुतिपु प्रसिद्धस्य ॥५॥
- (२) ओंतत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिवि-धस्स्मृतः ॥६॥

सवितुः।

(३) पुञ्-प्राणिप्रसवे इत्यस्य धातोरेतद्र्पम्, सुनोति सूयते वा उत्पादयति चराचरं जगत् स सविता सूर्यमण्डलान्तर्गतपुरुष ईव्वरः॥१॥

भाषा ।

तत् उसका-जो सब श्रुतियोंमें प्रसिद्ध है ॥ ५ ॥

ॐ तर्त और सर्त्य ब्रह्मके तीन प्रकारके नाम कहे गये हैं इससे 'तत्' ब्रह्मका नाम है ॥ ६ ॥

'पुत्र' धातु प्राणिके उत्पन्न करनेके अर्थमें है, इस धातुसे सविता यह रूप बना जो चराचर जगतको उत्पन्न करता है वह सविता देव सूर्यमण्डलके अन्तर्गत पुरुपईश्वर है१॥

⁽१) सायन०।

⁽२) गीता १७।३।

⁽३) भारद्वाजभा ० रावण ०।

(५०) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः।

संस्कृतम्।

(१) सविता सर्वभृतानां सर्वभावांश्च सूयते। स्वनास्त्रेरणाञ्चेव सविता तेन चोच्यते॥६॥

(२) सविता वै प्रसवानामीशे ॥ ७ ॥

(३) सूर्याद्भवन्ति भूतानि सूर्येण पाछितानितु। सृथें लयस्प्राप्नुवन्ति यः सूर्यः सोऽहमेव च ॥ ८॥

(४) हिरण्ययेन पात्रेण सत्यस्यापिहितं सुखम् ॥ योऽसावादित्ये पुरुषः सोसावहम् ॥ ९॥

भाषा ।

सर्वभृतोंका उत्पादक है और सर्व भावोंको उत्पन्न करताहै। उत्पन्न और परणाकरनेसे सविता कहते हैं ॥६॥ सर्वसृष्टिका ईश्वर सविता है॥ ७॥

सूर्यभगवान्से सर्वसृष्टिकी उत्पत्ति पालन और संहार होता है, जो सूर्यका स्वरूप है वही निश्चयकरके में हूँ ॥ ८ ॥

तेजोमय ढकनेसे सत्यरूप परमात्माका मुख ढका है। जो पुरुष सूर्यमण्डलमें है वहीं मैं हूँ ॥ ९॥

⁽१) वृ० यो वयात्र अव ९१५५-५६ । सायन ।

⁽२) कृष्णयनुः।

⁽३) स्योप०।

⁽४) भैन्युप०६।३५।

संस्कृतम् ।

(१) देवोयं भगवान्भानुरन्तर्यामी सनात-नः॥१३॥

(२) एष भूतात्मको देवः सूक्ष्मोऽव्यक्तः सना-तनः । ईश्वरः सर्वभूतानां परसेष्ठी प्रजापतिः॥१४॥

नसः सवित्रे जगदेकचक्षुषे जगत्प्रसूतिस्थिति-नाशहेतवे॥त्रयीमयाय त्रिगुणात्मधारिणे त्रिरिश्चि-नारायणशंकरात्मने॥ १५॥

भाषा।

यह सूर्य अगवान् अन्तर्यामी और सनातन देव हैं॥ १३॥

यहं भूतात्मारूप देव मूक्ष्म, अञ्यक्तरूप और सनातन सर्वभूतोंके ईश्वर, परमेष्ठी प्रजापति (ब्रह्मा) हैं॥ १४॥

डन सविता सूर्यदेवको नमस्कार है जो जगत्के एक नेत्र हैं, जो जगत्के उत्पत्ति, पालन और नाशके कारण हैं, जो ब्रह्मा-विष्णु-महेशरूप, त्रिगुणरूप धारण करनेवाले और

तीनों वेदके स्वरूप हैं॥ १५॥

⁽१) सूर्यपु० अ०१ श्लो० ११।

⁽२) मविष्यपु०।

संस्कृतस् ।

यनसपडलं ज्ञानघनं स्वगन्यं है त्रैलोक्यपूज्यं त्रिजुणारसक्ष्यस्॥ समस्ततेज्ञोसयदिव्यरूपं पुनातु मां तस्तवितुर्वरेण्यस्॥ १६॥

यन्तपडलं सर्वगतस्य विष्णोरात्मा परंधाम विद्याद्धतत्त्वम् ॥ सूक्ष्मान्तरैयोगपथानुगम्यं पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ १७ ॥

भाषा ।

ज्ञानवन, अगम्य, तीनों लोकोंके पूज्य, रजोग्रण-तमो-गुण-सतोग्रणरूप समस्त तेजोमय दिव्यस्वरूप सर्वके वर्णत्योग्य जो सविता देवका मण्डल है वह मुझको पवित्र करें ॥ १६॥

स्रविस्तुओं वयापक विष्णु भगवान्का आत्मा परमधास विशुद्धतन्त्र (तेज) रूप, योग द्वारा मृहम इद्विवाले महात्मा-ओंक प्राप्त होनेयोग्य सर्वसे उपासनीय ऐसा जो सूर्यभगवान् का मंडल है वह मुझको पवित्र करें ॥ १७ ॥

संस्कृतम् ।

(१) नत्वा सूर्यं परं धाम ऋग्यजुःसामरूपि-णम् । प्रज्ञानायाखिलेशाय सप्ताश्वाय त्रिमूर्तये ॥ नमो व्याहृतिरूपाय त्वमोङ्कारः सदैव हि। त्वामृते परमात्मानं न तत्पश्यामि दैवतम्॥ १८॥

- (२) असौ वै देवः सवितेति ॥ १९॥
- (३) तदक्षरं तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ २० ॥

भाषा ।

परमधाम, ऋग्यज्ञस्साम—वेदस्वरूप मूर्यको नमस्कार करके ज्ञानस्वरूप, सर्वेश्वर, सात घोडेके रथ पर चलनेवाले ब्रह्मा—विष्णु—प्रहेशस्वरूप, व्याहतिरूप सूर्यको नमस्कार है आप सदैव ॐकाररूप हैं तुम्हारे परमात्मस्वरूपको छोड-कर अन्य कोई देवता नहीं देखता हूँ ॥ १८॥

निश्चय करके यह देव सविता हैं॥ १९॥ वह श्रेष्ठ सविता है वह अविनाशी है॥ २०॥

⁽१) सूर्यपु० अ०१। १३। ३३। ३४। ३७।

⁽२) शतपथव्रा०।

⁽३) खेताखतर०।४।१८।

(44)

संस्कृतम् ।

१) लविता वे लर्नस्य प्रसानिता आग्निः सनि-तारमाह सर्वस्य प्रसवितारम्॥ २१ ॥

सविता च्ल्द्रसाः प्राण एव विद्युदेव सविता ॥ २२ ॥

सवितुरितिसृष्टिस्थितिलयलक्षणकस्य त्तर्वप्रपञ्चस्य समस्तद्वैतिविश्वसस्याधिष्टानं लक्ष्यते (यतो वा इसानि भूतानि जायन्ते येन जातानि यत्प्रत्ययन्त्यभिसंविद्यानित सस्व तद्बह्मीते–तैत्तिरीय०भृ०च०अ०१)॥ २३॥ भाषा ।

निश्चय करके सविता सबसृष्टिका उत्पन्न करनेवाला है। अग्निको सविता कहते हैं, अग्नि ही सबका उत्पन्न करने-वाला है ॥ २१ ॥

चन्द्रमा सविता है, प्राण भी सविता है, विद्युत् श्री सविता है ॥ २२ ॥

सृष्टि (उत्पत्ति) पालन लयहूप, सर्वप्रपंचका समस्त द्वेतविश्रमका आधारभूत सविता है (जिससे यह सर्वभूत उत्पन्न और पालित होते हैं जिसमें प्रवेश होते हैं तिसके जाननेकी इच्छा करो वही ब्रह्म है) ॥ २३ ॥

⁽१) निरुक्ते दैवतकाण्डे अ०७ पा०७ खं०९।

⁽२) गोपयबा०। पूर्वभागे। प्र०१ बा० ३३।

३) शंकरभा ॰ उन्बट॰ विद्यारण्य ॰

(५६) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः ।

संस्कृतम् ।

(१) एष हि खल्वात्सा सविता ॥ २४ ॥

(२) संरक्षिता च भूतानां सविता च ततः स्पृतः ॥ २५॥

(३) सूते सकलश्रेयांसि ध्यातृणामिति स-विता (उद्यन्तमस्तं यान्तमादित्यमभिध्यायन् कुर्वन् ब्राह्मणो विद्वान् सकलं भद्रसङ्गुते–इति श्चतेः)॥ २६॥

भाषा।

निश्चय करके यही सविता देव सब भूतोंका आत्मा है ॥ २४ ॥

सब भूतोंकी रक्षा करनेसे सविता नाम हुआ ॥ २५ ॥

ध्यान करनेवालेके सर्वकल्याणोंको उत्पन्न करनेके कारण सविता नाम हुआ (उदय और अस्त समय सूर्य भगवा-न्का ध्यान करता हुआ विद्वान् ब्राह्मण सर्व कल्याणको

प्राप्त करता है-यह श्रुति है)॥ २६॥

⁽१) मैच्युप०६ !८ ।

⁽२) वृ० यो० याज्ञ० अ०९। ९१।

⁽३) सन्ध्याभा०।

ब्रेण्य्य् ।

संस्कृतम् ।

(१) (एण्य)-प्रधाने प्रार्थनीये च-यद्दरं वर्तुम् अर्हम्, अतिश्रेष्ठं तद्दरेण्यम् ॥१॥

(२) वरणीयं प्रार्थनीयम्, जन्समृत्युदुःखा-दीनां नाशाय ध्यानेनोपासनीयम् ॥ २॥

(३) पुरुषार्थकामिभिरर्थ्यमानम् ॥३॥

भाषा।

एण्य प्रत्यय युक्त वृज्=चातु प्रधान और प्रार्थनीय अर्थमें है, जो वर्णन करनेके योग्य अतिश्रेष्ठ है वही वरेण्य शब्दसे कहा गया है॥ १॥

वरणीय=प्रार्थनीय अर्थमें है अर्थात् जन्म, मृत्यु दुःखादिकोंके नाश-निमित्त ध्यानपूर्वक उपासना करने योग्य है॥ २॥

पुरुषार्थकामनावालोंसे प्रार्थित है ॥ ३ ॥

- (१) वाचस्पत्ये।
- (२) सायनभा० भारद्वाज० रावण० महीधर०।
- (३) तैत्तिरीय सं० मा० गु०४ पृ० ५३।

(१) सर्वेरुपास्यतया ज्ञेयतया च सम्भजनी-यम्॥ १॥

- (२) वरणीयसभेदगम्यसित्यर्थः ॥ ५॥
- (३) सर्ववरणीयं निरतिशयानन्दरूपम् ॥६॥
- (४) वरेण्यसाश्रयणीयम् ॥ ७ ॥
- (५) वरेण्यं वरणीयञ्च संसारभयभीरुमिः॥ आदित्यान्तर्गतं यच्च भर्गाख्यं वा सुसुक्षुभिः॥८॥

भाषा ।

सर्वप्राणियों करके उपास्यभाव और ज्ञेयभाव करके चिन्तनकरने योग्य है ॥ ४ ॥

वरणीय=अर्थात् अभेद ज्ञानकरके जाननेके योग्य है॥५॥ सुबके चिन्तन करनेके योग्य परमानन्दरूप ब्रह्म है॥६॥

वरेण्यम्=आश्रय लेनेके योग्य है ॥ ७ ॥ वरेण्यम्=संसारके अयसे डरे द्वए पुरुषोंसे वा मुक्तिकी

इच्छावाले जनोंसे आदित्यके अन्तर्गत जो भर्ग नाम तेज है वह प्रार्थनीय है ॥ ८ ॥

(१) भारद्वाजस्मृ०।

- (२) वि० सं० मा०।
- (३) शङ्करमा०।
- (४) विद्यारण्य० ।
- (५) यो० याज्ञ० ९ । ५६-५७ ।

- (१)वरेण्यं सर्वतेजोभ्यः श्रेष्ठं वै परमं पदम् ।
- स्वर्गाऽपवर्गकासैर्वा वरणीयं सदैव हि ॥ ९ ॥ (२) वृणुते वरणार्थत्वाजाग्रत्स्वप्नादिवर्जितम् ।

नित्यं शुद्धं बुद्धमेकं सत्यं तद्धीमही३वरम् ॥१०॥

(३) सवितुस्खात्मभूतन्तु वरेण्यं सर्वजन्तुभिः।

भजनीयं द्विजा भर्गः तेजइचैतन्यलक्षणम् ॥ ११॥

(४) वरेण्यं सेव्यम् ॥ १२ ॥

भाषा ।

वरेण्यम्=सर्वतेजोंसे श्रेष्ठ परम्पद है । स्वर्ग तथा मोक्षकी कामना वाले पुरुषोंसे सदैव प्रार्थनीय है ॥ ९ ॥

वृणुते (वरणार्थ होनेसे) नाम्रत्स्वमाद्सि वर्जित,

नित्य, शुद्ध, बुद्ध, एक सत्यरूप तिस ईश्वरका ध्यान करता हूँ ॥ १० ॥

सविता देवका आत्मरूप, सर्वजन्तुओंसे प्रार्थनीय ऐसा जो भर्ग तेज चैतन्यरूप है वह दिजों द्वारा भजन करने योग्य है॥ ११॥

वरेण्यम्=सेवाकरनेयोग्य है ॥ १२ ॥

(१) अग्निपु० अ०-२१६। ५।

- (२) अभिपुराण अ० २१६ स्हो० ६
- (३) स्कन्दपु० सूतसंहितायाम् ।
- (४) खण्डराजदीक्षित सं० भा०।

भर्गः ।

संस्कृतम्।

- (१) भाभिर्गतिरस्य हीति भर्गो भर्जयतीति वैष भर्गः॥१॥
- (२) भञ्जो=आमर्दने,मृजी भर्जन इत्येतयोधी-त्वोर्भर्गः । भजतां पापभञ्जनहेतुभूतमित्यर्थः॥ श्राजु दीप्तावित्यस्य धातोवी भर्गः तेज इत्यर्थः॥२॥

भाषा ।

आ=गांति-किरणद्वारा गति अर्थात् विषयव्याप्ति है जिसकी वह अर्ग है अथवा जगत्के नाश करनेके कारण भर्ग नाम हुवा ॥ १॥

भन्ज धातु आमर्दन अर्थमें और भृज धातु भर्जन अर्थमें है, इन दोनों धातुओंसे भजन करनेवालोंके पापके भजनका कारण होनेसे भर्ग नाम हुआ । भ्राजृ धातु दीप्ति अर्थमें है इस धातुका रूप भर्ग है, भर्गका अर्थ तेज है ॥ २ ॥

⁽१) मैत्र्युप०६।७।

⁽२) भारद्वाज० ।

(१) भ्रस्ज=पाके, असुन्, श्रस्जो रोपधयोर-नन्यतरस्यामिति रोपधयोलोंपः रसायसः न्यङ्का-दिलांकुलम् ॥ ३॥

(२) श्रस्ज×घञ्, आदित्यान्तर्गते ऐस्वरे तेजिल ॥ ४ ॥

(३) पापानां तापकं तेजोसण्डलस् ॥ ५॥

(१) अविचादोषभर्जनात्मकज्ञानैकविषय-त्वम् ॥ ६॥

भाषा ।

भ्रस्त्र धातु पाक अर्थमें असुन् प्रत्यय "भ्रस्तोरोपधयो-रमन्यतरन्याम्" इस सूत्रसे उपधाका लोप फिर रमागम-न्यङ्कादिसे कुःव होता है इससे भर्ग सिद्ध हुआ ॥ ३॥ (धन् प्रत्यययुक्त भ्रस्त् धातु) सूर्यमण्डलान्तर्गत ईश्वर-

सम्बन्धी तेज अर्थमें है ॥ ४ ॥

पापोंके तपाने (नाश करने) वाला तेजरूपमण्डल अर्ग है ॥ ५ ॥

अविद्याके दोषोंका नाश करनेवाला एक (केवल) ज्ञान स्वरूप भर्ग है ॥ ६ ॥

(१) ग्रह्मपरिशिष्टे ।

A STATE OF THE PROPERTY OF THE

(२) तारानाथकोशे।

(३) सायनभाष्ये।

(४) शंकर० महीधर०।

(१) भगोंऽविद्यातत्कार्ययोर्भर्जनाद्भर्गः।

स्वयंज्योतिः परब्रह्मात्सकं तेजः ॥ ७ ॥

(२)भ्रस्जपाके भवेद्धातुर्यस्मात्पाचयते ह्यसौ।

श्राजते दीप्यते यस्माजगदन्ते हरत्यपि ॥ ८॥

(३) भर्जीन्त नश्यन्ति पापानि संसार-

जन्ममरणादिदुःखमूलानि येन असौ भर्गः ॥९॥

(४)प्रकाशप्रदानेन जगतो वाह्याभ्यन्तरतमो-

भञ्जकत्वाद्धर्गः ॥ १० ॥

आषा।

अविद्या और उसके कार्योंका नाश करनेसे भर्ग स्वयं-ज्योतिः परब्रह्मरूप तेज है ॥ ७ ॥

जिस कारण पचनार्थक श्रस्त्रधातु सबको पचन करता है प्रकाशकरने तथा अन्तमें जगत्के लय करनेके कारण

यह भर्ग नाम हुआ ॥ ८ ॥

पाप अर्थात् संसाररूपी जन्ममरणादि दुःखका मूल

जिससे नष्ट हो वह भर्ग है ॥ ९ ॥

प्रकाश द्वारा जगत्के भीतर बाहरके अज्ञानरूप तमका नाश करनेसे भर्ग नाम हुआ॥ १०॥

⁽१) सायन० विद्यारण्य० महोजिदी०।

⁽२) वृ० यो० याज्ञ० अ०९। ५२-५३।

⁽३) सं० मा०।

⁽४) वरदराज०।

(१) प्रकाशरूपं यत्प्रकाशेन सर्वप्रकाशः प्रका-शते । ("न तत्र सूर्यो भाति न चन्द्रतारकं नेमा विद्युतो भान्ति कुतोऽयमग्निः । तमेव भान्तमनु-भाति सर्वं तस्य भासा सर्वमिदं विभाति" कठोप०) ११॥

(२) भर्गस्तेजः-प्रकाशः प्रकाशो ज्ञानम्, श्रे यान्निरुपद्रवं निष्पापं निर्गुणं शुद्ध सकलदोषरहितं पक्कं परमार्थविज्ञानस्वरूपं तद्भर्गः ॥ १२ ॥

भाषा ।

प्रकाशक्ष जिसके प्रकाशसे सर्व प्रकाशित है वह भर्ग है (यथा श्रुत्यर्थ) (न वहां सूर्य प्रकाश करता है न है चन्द्रमा न तारा न विद्युत, तो इस अभिका वहां कव प्रकाश होसकता है; उसके प्रकाशः होनेसे पश्चात सव प्रकाशित होते हैं और तिसीके प्रकाशसे यह सर्व प्रकाशित है—कठोप॰)॥ ११॥

भर्ग तेज है प्रकाश है और प्रकाशज्ञानरूप है जो उपद्रवरहित, पापरहित, निर्गुण गुद्ध सकल दोपरहित परिपक्ष परमार्थ विज्ञानस्वरूप वही भर्ग है॥ १२॥

⁽१) सन्ध्यामा०। (२) निरुक्ते। तारानाथ०।

(१) भ-भांसंयतीमाँ होकानितिं।

र-रञ्जयतीमानि भूतानि ।

ग-गच्छन्त्यस्सिन्नागच्छन्त्यस्मादिसाः

व्रजास्तस्माद्धरणत्वाद् भर्गः ॥ १३ ॥

(२) भेति-भासयते छोकान् रेति रञ्जयते प्रजाः। ग इत्यागच्छतेऽजस्रं भरगाद्गर्ग उच्यते ॥ १४॥

भाषा ।

भ=इन लोकोंको प्रकाशित करता है। र=इन भूतोंको आनन्द देता है।

ग=जिस कारण आत्मामें यह सब प्रजा सुष्टित और प्रलय कालमें लयको प्राप्त होती है; पुनः जिस कारण आत्मासे जाप्रत् और सृष्टिकालमें सब उत्पन्न होती है वह गअक्षरका अर्थ है तिस भासन रंजन और गमनोंसे

भर्ग शब्द करके सर्वीत्माका ग्रहण है ॥ १३ ॥

'भ' सर्वलोकोंको प्रकाश करता है 'र' सर्व प्रजाको आनन्द देता है 'ग' बारम्बार छय होता है तिस कारणसे अर्ग कहलाता है ॥ १४ ॥

⁽१) मैत्र्युप०६।७।

⁽२) बु॰ यो॰ याज्ञ॰ अ॰ ९। स्हो॰ ४५-४६।५०।५३।५४।२३।

श्राजते च यदा भर्तः पुरुषः। जर्वात्सा सर्वभावस्तु आरका तेन निर्वेचते॥१५॥

कालाग्निक्षपसास्थाय सतार्चिः सतरहिसिभिः।

स्वेन रूपेण तस्माद्वर्ग इति

(सत्ये)॥ १६॥

ईश्वरं पुरुषास्यं तु सत्यधर्साणसञ्ययम्।सर्गा-ल्यं विष्णुसंज्ञं तु यं ज्ञात्वाऽसृतसञ्जुते

हृद्व्योम्नि तपते होष वाहो सूर्यस्य चान्तरे। अग्नौ ह्यभुसके होष ज्योतिश्चित्रतरङ्गवत्॥१८॥

साषा ।

प्रकाशस्य होनेसे भर्ग नाम है, परिपूर्ण होनेसे नाम है, सर्वात्मा और सर्वस्य होनेसे आत्मा कहा गया 著用 经用

कालामिरूपमें स्थित होकर सप्तार्चि अमिरूप और सुनिकरणोंकरके जो अपने रूपसे प्रकाशित है तिस कार-णसं भगे है ॥ १६ ॥

ईश्वर पुरुष सत्यधर्मवाला अविनाशी भर्गनामक विष्णु है जिसको जानकर मोक्षको प्राप्त होता है ॥ १७ ॥

वह् भर्ग हृदयाकाशमें तथा बाहर सूर्यमण्डलभें तपायसान ्य होता है और नाना प्रकारके तरंगकी नाई यह उयोतिहर

थर्ग 'शूमरिहत अग्रिमें प्रकाशस्व ह्र प है ॥ १८ ॥

हृदाकाशे तु यो जीवः साधकैरुपगीयते। स एवादित्यरूपेण बहिर्नभिस राजते॥१९॥ तस्य चान्तर्गतं धाम सूक्ष्मं प्राकाश्यमेव च। स चात्मा सर्वभूतानां चेतोमात्रस्वरूपकः॥२०॥ सर्वस्यैवोपरिष्टस्य पूरणात्पुरुषः स्मृतः। भवभीत्यन्धकारेभ्यः शंकरोति ततः शिवः२१॥ (१) भण्डलं पुरुषो रश्मय इति त्रयं भर्ग-पदवाच्यम्॥२१॥

भाषा ।

जो भर्ग हृदयाकाशमें जीवात्मारूपसे साधक पुरुषों करके कथन किया गया है वही भर्ग बाह्याकाशमें आदित्य-रूपसे शोभित है ॥ १९॥

तिस आदित्यके अन्तर्गत जो सूक्ष्म प्रकाशरूप है वही सब भूतोंकी चेतनरूप आत्मा है ॥ २०॥

वही अर्ग सर्वोपीर परिपूर्ण होनेसे पुरुष कहा गया है। उसी अर्गको संसारके अयह प अन्धकारसे वचानेके कारण शिव कहते हैं ॥ २१॥

सूर्य मण्डल, पुरुष, तथा किरण यह तीनों भर्ग पदके वाच्यार्थ हैं ॥ २२ ॥

⁽१) ग्रुक्तयजुः । वाजसनेयसंहिता।

- (१) बीच्यं वे सर्ग इति॥ २३॥
- (२) गायज्येव सर्गः तेजो है गायत्री॥२४॥
- (३) तेजो वे ब्रह्मवर्चसम्। गायत्री तेजस्वी वर्चसी अवति ॥ २५॥
- (४) स यश्चायं पुरुषे पश्चासावादित्ये स एकः ॥ २६ ॥

थाषा ।

निश्चय करके वल भर्ग रूप है ॥ २३ ॥

निश्रय करके गायत्री ही भर्ग है तथा तेज ही गायत्री हैं ॥ २४ ॥

निश्चय करके तेज ही बहा तेज है गायत्री तेज-न्दस्य है ॥ २५॥

जो सब प्राणियोंमें आत्मा है और जो सूर्यमें है दोनों एक हैं ॥ २६ ॥

⁽१) ज्ञातपथन्ना० ५।४।५।१।

⁽२) गोपथत्रा० रावण० पू० । ५ । १५ ।

⁽३) ऐतरेयब्रा० अ० १। ख० १। ब्रा० ५।

⁽४) तैत्तिरीयत्रा॰ त्रह्मवल्ली ख॰ ८।

- (१) आदित्यान्तर्गतं यच ज्योतिषां ज्योति-रुत्तसम् ॥ हृदये सर्वभूतानां जीवभूतः स तिष्टति॥ २७॥
- (२) तज्ज्योतिः परमं ब्रह्म अर्गस्तेजो यत-स्स्मृतम् ॥ २८॥

भादीसाविति रूपंहि श्रस्जपाकेऽथ तत्स्मृत्म्।। ओषध्यादिकं पचित श्राजृ दीसौ तथा भवेत्। भर्गः स्याद्धाजत इति बहुलं छन्द ईरितम् २९॥

भाषा।

आदित्यके अन्तर्गत जो सर्व ज्योतियोंमें उत्तम ज्योति है वही सब भूतोंके हृद्यमें जीवरूपसे स्थित है ॥ २७ ॥

जिस कारणसे भर्ग तेजरूप है उसीसे वह तेज पर-ब्रह्म है॥ २८॥

दीप्त्यर्थक 'भा' थातुका रूप भर्ग है। जिससे ओष-ध्यादिक परिपक्त होते हैं उस 'अस्ज' थातुका रूप भर्ग है। दीप्त्यर्थक आजृ धातुका रूप भर्ग है (और प्रकाशरूप अर्गको वेदमें बहुत प्रकारसे कथन किया है)॥ २९॥

⁽१) वृ० यो० याज्ञ०।

⁽२) अग्निपु॰। अ० २१६। व्लो॰ ३,४,५,९।

हिवं केचित्पर्रित रूप शक्तिरूपं एठांति च । केचित्सूर्यं केचिव्यंति वेद्या अग्निहोत्रिणः ३० अग्न्यादिरूपी विष्णुर्हि वेदादी बह्य गीयते। तत्पदं परमं विष्णोर्देवस्य सवितुसस्ट्तस्॥ ३१॥

(१) एतह्रह्मेतद्युतसेतद्रगः॥ ३२॥

(२) भर्गः । अद्रयानन्दलक्षणं सर्वजगदुपा-हानं परिपूर्णज्योतीरूपं विम्बस्थानीयं ब्रह्म वाक्या-र्थतया पर्यवसन्नम्, एतादृग्बाह्मं तद्रुपत्वेनेति

शेषः ॥ ३३ ॥

आषा ।

कोई भर्गको शिव कहते हैं, कोई शक्ति निरूपण करते हैं। कोई सूर्य और कोई वैदिक अमिहोत्री अग्निरूप कहते हैं॥ ३०॥

अपि आदि रूपी विष्णु हैं, यह वेद आदिमें ब्रह्मरूपसे जयत कियागया है वह विष्णुदेव सविताका परमपद कहा गया हैं॥ ३१॥

यही बहा है यही मोक्ष है यही भर्ग है ॥ ३२ ॥

भर्ग-अद्भय, आनन्दरूप, सम्पूर्णजगत्का आधार, परि-पूर्ण ज्योतिस्वरूप विम्बरूप ब्रह्मवाक्योंके अर्थरूपसे सम्पन्न ऐसा ब्रह्मसम्बन्धी तेज भर्गरूपसे कहा गया है ॥ ३३॥

⁽१) सैत्र्युप०६। ३५।

⁽२) निर्णयकल्पवल्ल्याख्य० सं० भा०।

(७०) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः।

स देवः प्रकाशस्वरूपं वा ॥ १ ॥

देवस्य।

संस्कृतम्।

(१) दिवु-क्रीडा-विजिगीषा-व्यवहार-द्युति-स्तुति-मोद-मद-स्वप्त-कान्ति-गतिषु, पचाद्यच् -इत्यच् प्रत्ययः। दीव्यति प्रकाशते चराचरञ्जगत्

(२) सर्वद्योतनात्मके आत्मनि परमेश्वरे अमरे॥२॥

भाषा ।

दिवु धातु कीडा, विजिगीपा (जीतनकी इच्छा) व्यवहार, द्यति, स्तृति, मोद, मद, स्वप्न, कान्ति, गित इन अर्थोंमें है। 'पचाद्यच्' इस मृत्रसे 'अच्' प्रस्यय करने पर 'देवता' बनता है। जो चर अचर जगत्को प्रकाश करे वह देव है अथवा जो प्रकाश स्वरूप है॥ १॥

सर्व प्रकाशोंमें, आत्मामें, परमेश्वरमें, देवताओंमें 'देव' शब्द पटित होता है ॥ २ ॥

⁽१) धासु पाठ० । भरद्राज० । सायन० । रादण० ।

⁽२) वाचस्पतिको । शब्दस्तोमको । महीधर ।

गायञ्यर्थः ।

(90)

संस्कृतम् ।

- (१) सर्वद्योतनात्मकाखण्डचिदेकरसम् ॥३॥
- (२) देवो दानाद्वा दीपनाद्वा ग्रुस्थाने भवति वा ॥ ४॥
- (३) दीव्यते क्रीड़ते यस्माद्रोचते द्योतते दिवि । तस्माद्देव इति प्रोक्तः स्तूयते सर्व दैवतैः ॥ ५॥

भाषा।

सर्वका प्रकाशक, अखण्ड, चैतन्य, एकरस 'देव' का अर्थ है ॥ ३ ॥

'देव' शब्द दानमें, प्रकाश करनेमें, वा स्वलींकके अर्थ में है ॥ ४ ॥

जिसकारणसे स्वंगेमें कीडा करता है प्रकाश करता है इस कारण देव कहागया है और जिसकी सब देवता स्तुति करते हैं ॥ ५॥

⁽१) शङ्करभा ।

⁽२) निर्स्के दैवतकांण्डे ७ अ० ४ पा० २ ख०।

⁽३) बृ० यो० याज्ञ० अ०९ । ५४ । विद्यारण्य० ।

(१)रज्ज्वाकाराद्दीव्यतिप्रकाशयतीति देवः। ध्यातृहृद्यारिवन्दसन्ये क्रीड़तीति देवः॥ दीव्यति नन्दतीति देवः। अखण्डानन्दैकरस इत्यर्थः ॥६॥

(२) सर्वभूतेष्वात्मतया द्योतते स्तूयते स्तुत्यैः सर्वत्र गच्छति तस्माद्देवः।

(एको देवः सर्वभूतेषु गृढः सर्वव्यापी सर्वभृता-न्तरात्मा।कर्माध्यक्षः सर्वभूताधिवासः साक्षी चेता केवळो निर्गुणइच–इति श्वेताइवतरः । ११) ७॥

भाषा।

रज्जु (रस्सी) के आकारमें सर्पके भ्रमके सहरा अधि-ष्ठान रूपसे जो सबका प्रकाशक है वह देव कहा गया है। ध्यान करनेवालेके हृद्य कमलमें क्रीडा करनेसे 'देव' कहा गया है। आनन्दित करता है इस कारण 'देव' शब्द अखण्डानन्द एक रसके अर्थमें है॥ ६॥

सब भूतों में आत्मारूपसे प्रकाश करता है, स्तोत्रों से खुति किया जाता है सब जगह आत्मरूपसे प्राप्त है इस कारण देव कहा जाता है (एकही देव सर्वभूतों में गुह्य है सर्व व्यापी और सर्वभूतों का अन्तरात्मा है । कर्मों का स्वामी सर्व भूतों के निवास स्थान, साक्षी, सबको चेतन करनेवाला केवल और निर्शुण है—श्वेताश्वतर ६ १११)॥॥॥

⁽१) सन्ध्यामा०।

⁽२) शब्दकल्पद्रुमे ।

धीमहि।

संस्कृतय्।

(१) ध्यै=चिन्तायाम् । ध्यायतेर्लिङ्, बहुलं छन्दसीति सम्प्रसारणं (अ) व्यत्ययेनात्सनेपद्म्। ध्यायामः । चिन्तयामः निगमानिरुक्तविधानरूपेण चक्षुषा निदिध्यासं तद्विषयं कुर्म इति ॥ १॥

(२) धीड्=आघारे लिङि बहुलं छन्दसीति विकरणस्य लुका ध्यातृध्येयव्यापाराभिन्नत्वमेव ध्यानम् ॥ २॥

भाषा ।

"ध्यै" धातु चिन्तवन अर्थमें है ध्यायते लिङ्-बहुछं छन्दिस इस मूत्रसे सम्प्रसारण व्यत्ययसे करने पर आत्मने पद हुआ निगम, निरुक्त विधानरूप नेत्रसे चिन्तन करता हूँ अर्थात् तत् स्वरूपका ध्यान करता हूँ ॥ १ ॥

धीङ् धातु आधार अर्थमें है 'लिङि बहुलं छन्द्सि' इस भूत्रसे विकरण का लोप हुआ ध्यान करनेवालेका ध्यान करने योग्य परमात्मासे अभेद होना ध्यान कहा जाता है॥ २॥

⁽१) भरद्वाज ग्रह्मपरिशिष्टे । याज्ञवल्क्य ० उन्बट ० ।

⁽२) रहापरिशिष्टे । सायन । विष्णु स० मा०।

(७४) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः ।

संस्कृतम्।

- (१) घीमहि-आत्सना आत्मरूपेण ध्यानं वयमकुर्म । ध्यानम् नाम " सर्वशरीरेषु चैतन्यै-कतानता "॥ ३॥
 - (२) ध्यानेनहेया वृत्तयः ॥ ४॥
 - (३)रागोपहितध्यानम्॥ ५॥
- (४) ध्यानेन लभते मोक्षं मोक्षेण लभते सुखम् । सुखेनानन्दवृद्धिः स्यादानन्दो ब्रह्मविद्यहः ॥ ६ ॥

भाषा ।

आत्मसंप करके आत्माका हम लोग ध्यान करते हैं। "सर्वशृतोंमें चैतन्यका फैलाव देखना" ध्यान कहलाता है ॥ ३॥

ध्यानसे वृत्तियोंका त्याग करना चाहिये॥ ४ ॥

किसी वस्तुमें अनुगागसे युक्त होनेका नाम ध्यान है॥५॥ ध्यानसे मोक्ष और मोक्षसे सुख प्राप्त होता है, सुखसे आनन्दकी वृद्धि होती है और आनन्द ही ब्रह्ममूर्ति है ॥६॥

⁽१) मण्डलब्राह्मणोप०।१।१

⁽२) योगसूत्रपा० २। स्० ११।

⁽३) सांख्यसूत्रे अ०३। स्०३०।

⁽४) रुद्रयामलोत्तरतन्त्रे पट० २४ । १३९ । ३ 1

(१) वयं ध्यायेम-ध्येयतया मनसा धारयेम वा वयस् उपासीमहि उपास्महे वा ॥ ७॥

- (२) अहस्ब्रह्मोति धीसहि॥ ८॥
- (३) ब्रह्मैव साक्षिरूपमिति तह्यक्षणतया ध्यायितमुपपन्नमिति ॥९॥
- (४) ध्यायते अनया ध्यानं वा धीः । ध्यायतेः सम्प्रसारणं च इति धिय् सम्प्रसारणे हल इति दीर्घः ॥ १०॥

भाषा ।

ध्येय पदार्थको हम छोग मनमें धारण करते हैं अथवा हम उपासना करते हैं ॥ ७ ॥

मैं ब्रह्मरूप हूँ ऐसा ध्यान करता हूँ ॥ ८॥

ब्रह्म ही साक्षीरूप है इस लक्षणसे ध्यान करने वालेको ध्यान करना युक्त है ॥ ९ ॥

जिससे ध्यान किया जाय उसको ध्यान व धी कहते हैं 'ध्यायतेः सम्प्रसारणं च'' इस मूत्रसे ध्यके यकारको इ होगया तो धि बना फिर ''हलः'' इस सूत्रसे दीर्घ होगया इस प्रकार थी रूप सिद्ध होता है ॥ १०॥

⁽१) स्कन्दपु०। भारद्वाज०। सायन०।

⁽२) अमिपु० अ० २१६। १८।

⁽३) निर्णयकस्पवल्ल्याख्य सं० भी०।

गायत्रीमन्द्रार्थभास्करः। संस्कृतम् । (१) बुद्धयो वै थियः ॥ १॥ (२) धियो धारणत्रत्यो बुद्धयः (धीर्धारणा-वती सेधेत्यमरः)॥ २॥ (३) धर्सादिविषया बुद्धिः ॥३॥ (४) कर्माणि धिय इति॥ ४॥ (५) धीराव्दो वृद्धियचनः, कर्मवचनो, वाग्वचतर्च ॥ ५ ॥ भाषा । बुद्धियां निश्चय करके 'धियः' हैं ॥ १ ॥ . धियः भारण करनेवाली दुद्धियाँ हैं (भी भारण करने वाली इद्धिको कहते हैं, यह असरकोपका वचन है)॥ २ ॥ धर्मादि विषयोंवाली बुद्धिको धी कहते हैं ॥ ३ ॥ कमींकी गुद्धि कहते हैं ॥ ४ ॥ धीशब्द बुद्धिवाची कर्मवाची और वाक्वाची है ॥ ५ ॥ (१) में खुप ०६! ७। भरद्राज ०। (२) विष्णुम० भाषा (३) यात्र । सायन ।।

(४) अधर्वण ०।

(५) उच्चर० । सायन० ।

"一方面"是一种一种一种一种一种一种一种一种一种一种一种一种

(१) कर्मयज्ञसहस्रेभ्यस्तपोयज्ञो विशिष्यते। तपोयज्ञसहस्रेभ्यो जपयज्ञो विशिष्यते॥ जपयज्ञसहस्रेस्यो ध्यानयज्ञो विशिष्यते।ध्यानय-ज्ञात्परो नास्ति ध्यानं ज्ञानस्य साधनम्॥६॥

यः

- (२) यः शब्दश्च यदित्यर्थे लिङ्गव्यत्ययतो भवेत् ॥ १॥
- (३) य इति लिङ्गव्यत्ययः यद्गर्गः यः भर्गो वा ॥ २ ॥

भाषा ।

हजारों कर्मयज्ञसे तपयज्ञ विशेष हैं और हजारों तप-यज्ञसे जपयज्ञ विशेष हैं और हजारों जपयज्ञसे ध्यानयज्ञ विशेष हैं—ध्यान यज्ञसे परे कोई यज्ञ नहीं है ध्यान ज्ञानका साधन है॥ ६॥

लिङ्गव्यत्ययसे 'यः' शब्द 'यत्' होजाता है ॥ १ ॥ 'यः' शब्द लिङ्ग व्यत्ययसे 'यद्गर्गः' बना वा 'यः' भर्गः बना ॥ २ ॥

⁽२) लौहित्यनीलकण्ठ० । भरद्वाज० । उन्वद० ।

⁽३) यो ० याज्ञ ॰ भरद्वाज ॰ सायनं ० । महीघर ० ।

(96) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः। संस्कृतम् । (१) यत्तत्यज्ञानादिलक्षणम् ॥ ३ ॥ (२) यः प्रत्यग्रूषः ॥ ४ ॥ (३) यः सविता देवः॥ ५॥ नः (४) नः अस्माकम् ॥ १ ॥ (५) नः अस्मदीयाः ॥ २ ॥ भाषा । जो सत्पज्ञानादिहर बहा है ॥ ३ ॥ जो जीवात्मरूप है ॥ ४ ॥ जो सविता देव है ॥ ५ ॥ 'नः' का अर्थ हमारा है ॥ १ ॥ 'नः' का अर्थ हम लोगोंका है ॥ २ ॥ (१) विद्यारण्यस्या । (२) निर्णयकस्पयसस्याख्यसं भा भ

(३) सायन० महीधर० (४) सायन० महीधर० (५) तारानाथतर्कवाच०

प्रचौद्यात्।

संस्कृतम् ।

- (१) चुद्-प्रेरणे प्रकर्षेण चोदयति प्रेरयति॥१॥
- (२) प्रेरयति, अयमाशयः-सर्वस्याश्चेतनाया-अचेतन चेतनोऽपि भगवांश्चात्र प्रतिप्रेरयति ॥२॥
- (३) योजयति धर्मार्थकाममोक्षेष्वस्मदादीनां दुद्धिम् ॥ ३ ॥

भाषा ।

'चुद्' घातु 'प्रेरणा' अर्थमें है । अच्छीतरहसे प्रेरणा करनेसे 'प्रचोदयात्' हुआ ॥ १ ॥

'प्रेरयति' का यह आशय है कि सब अवेतनोंके अचै-तन्यको चेतन्य करनेवाला भगवान् यहां प्रेरणा करता है ॥ २ ॥

धर्म, अर्थ, काम, मोक्षमें हम लोगोंकी बुद्धिको युक्त करता है ॥ ३॥

⁽१) सायनः। मंहीधरः योः याज्ञः। उच्चटः।

⁽२) विणुस० भा०

⁽३) भारद्वाज ० योगियाज्ञ ० ।

(८०) गायत्रीयन्त्रार्थभास्करः।

संस्कृतम्।

(१) प्रचोदयात्=प्रक्षेण प्रेरयति सकलं कर्मानुष्टानप्रयणा दुष्कर्मित्रमुखाइचारमहु द्धीः करोति । अन्तःकरणवृत्तीः प्रकाशयति वा ॥ ४॥

(२) प्रचोदयात् प्रेरयेत्॥ ५॥

च॰यो॰याइवल्क्योक्तगायत्रीमन्त्रार्यः।

तच्छव्देन तु यच्छव्दो वोद्धव्यः सततं वुधैः। उदाहृते तु यच्छव्दे तच्छव्द उदितो भवेत्॥१॥

भाषा ।

प्रचोदयात्=अच्छी तरहंसे सम्प्र्ण कर्मानुष्ठानके सन्मुख और दुष्कर्मसे विमुख हमारी धुद्धिको करता है अथवा अन्तःकरणकी वृत्तियोंको प्रकाश करता है ॥ ४॥

प्रेरणा करे ॥ ५ ॥

'तत्' शब्द जहां हो वहां यत् सब्द भी बुद्धियानोंको सदैव जाननेयोग्य है। आर जहां पर 'यत्' शब्द कहा गया है वहां पर 'तत्' शब्दका भी बोध होता है॥ १॥

⁽१) तैतिरीय सन्ध्या भा० गु० ४ पृ० ५२, ५३

からからないないのできるとのなるのできると

संस्कृतस्

सदिता सर्वभृतानां सर्वभावांत्रच सृथते। सवनात्प्रेरणाचैव सविता तेन चोच्यते॥ २॥ दरेण्यं वरणीयश्च संसारभयभीकारिः।

आदित्यान्तर्गतं यच भर्गाख्यं वा सुसुक्षुभिः॥३॥ श्ररज्पाने भवेद्वातुर्यस्मात्पाचयते हासौ ।

आजते दीप्यते यस्माजगदन्ते हरस्यपि॥ ४॥

दीव्यते क्षीड़ते यस्माद्रोचते चोतते दिवि । तस्मादेव इति प्रोक्तः स्तूयते सर्वदैदतैः ॥ ५ ॥

भाषा ।

सविता सर्व भृतोंके सब भावोंको उत्पन्न करता है। उत्पन्न तथा प्रेरणा करनेसे सविता नाम कहा जाता है॥२॥

संसारके भयसे डरे हुए जनों और मोक्षकी इच्छा-वारोंसे सूर्यमण्डलके अन्तर्गत जो भर्गरूप तेज है वह प्रार्थना (भावना) करनेके योग्य है ॥ ३ ॥

भ्रहन धातुका अर्थ पकाना है जिस कारणसे सबको पकाता है प्रकाशित करता है तथा अन्तमें संसारका नाश

पकाता है प्रकाशित करता ह तथा अन्तम संसारका नाश करता है इससे भर्ग शब्द हुआ ॥ ४ ॥

जो स्वर्ग लोकमें जिस कारणसे कीडा और प्रकाश करता है तिस कारणसे देव शब्द कहागया है जिसकी स्तुति देवता लोग करते हैं॥ ५॥

देवस्य सवितुर्यच भर्गसन्तर्गतं विभुम्।
ब्रह्मत्रादिन एवाहुर्वरेण्यं तच्च धीमहि ॥ ६ ॥
चिन्तयायो वयम्भर्गो धियो यो नः प्रचोदयात् ।
धन्मधिकासमोक्षेषु बुद्धिवृत्तीः पुनःपुनः ॥ ७ ॥
बुद्धेर्वोधियता यस्तु चिदात्मा पुरुषो विराट् ।
स्वितुस्तद्वरेण्यन्तु सत्यधम्मीणमीव्वरम् ॥ ८ ॥
हिरण्यवर्णं पुरुषं ध्यायेम विष्णुसंज्ञकम् ।
विश्चात्सर्वभूतानां विष्णुरित्यभिधीयते ॥ ९ ॥

सविता देवके अन्तर्गत जो अग्रह्म तेज व्यापक है उसी तेजको ब्रह्मज्ञानी लोग वरेण्य कहते हैं, तिसका हम ध्यान

भाषा।

करंते हैं ॥ ६॥

जो भर्ग-धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, में बार वार बुद्धिकी वृत्ति प्रेरणा करता है उसका हम चिन्तन करते हैं॥ ७॥

बुद्धिको बोध करानेवाला जो चैतन्यरूप आत्मा पुरुष विराट् है वही सविता देवका सत्यधर्मवाला ईश्वररूप तेज प्रार्थनीय है ॥ ८ ॥

टस हिरण्यवर्ण विष्णुरूप पुरुषका हम ध्यान करते हैं । सब भृतोंमें प्रवेश करनेसे विष्णु यह नाम कहा गया है ॥ ९ ॥

Carlotte Abbutte

स्त्रहित्त ।

प्रस्ति विस्ति विस्ति ।

प्राचाणसिणधातूनां तेजोरूपेण लंग्धितः ॥ १० ॥

मृक्षीणधितृणानां च रसक्ष्रेण तिष्ठति ।

तन्मात्रसूतो भूतानां विश्वक्ष्पेण लंग्धितः ॥११॥

आदित्ये हृद्ये चैवं योऽग्री व्योप्ति तथापरे ।

एक एव भवेदात्मा पंचधावस्थितस्तु सः ॥ १२ ॥

एवं यो विने आत्मानसेक्ष्मा सन्प्रतिष्ठितम् ।

ज्ञात्या चोणस्यते सञ्यक् लोऽसृतत्वाय कर्पते१३

भाषा ।

ब्रह्मासे तृण पर्यन्त इसी प्रकार ज्यापक होकर स्थित है। पत्थर, सणि, तथा सर्वधातुओंमें वह तेजरूपसे

स्थित है ॥ १० ॥

ृहक्ष, औपिष, और तृणोंमें रसह्रपसे और सर्व भूतोंमें आत्महृपसे स्थित है इस प्रकार विश्वहृपसे स्थित है ॥ ११ ॥

सूर्य, हृदय, अप्ति, आकाश तथा ईश्वरमें एकही आत्मा पांच प्रकारसे स्थित है ॥ १२ ॥

इस प्रकार जो पुरुष आत्माको सबमें एक रूपसे स्थित जानता है और जानकर अच्छी तरह उपासना करता है वह मुक्त होजाता है ॥ १३॥

(88)

भरद्वाजम्यत्युक्तमायत्रीभाष्यम् ।

संस्कृतस् ।

पदानि देश सन्त्रस्य तदादीनि यथाक्रसात्। पदं प्रत्यर्थनिष्पत्तिः स्पष्टन्तु क्रियतेऽत्र हि ॥ १ ॥

तंदिति द्वितीयैकवचनम् अनेनाखिल-जगदुत्पत्तिस्थितिलयकारणभूतसुपनिषदि मानं निरुपमं तेजः सूर्यमण्डलाभिध्येयं परब्रह्मा-भिधीयते ॥ संवितुरितिषष्टयेकवचनं, षुञ् प्राणि-प्रसदे, इत्यस्य धातोरेतद्रूपम्, सर्वस्य भूतजातस्य त्रसवितुरिखर्थः ॥

भाषा ।

मन्त्रमें 'तत्' आदि क्रमसे देंस पद हैं प्रत्येक पदका अर्थ यहां स्पष्ट करके कहता हूं ॥ १ ॥

'तेत्' यह द्वितीयाका एकवचन है इससे अखिल जग-त्की उत्पत्ति स्थिति लयका कारणभूत उपनिषदोंमें कथित जो उपमारहित तेज सूर्यमण्डलमें स्थित परबहा है, वह कहा गया है ॥ सवितुः यह षष्ठीका एकवचन है 'षुञ्' धातुका अर्थ प्राणियोंके उत्पत्ति करनेमें है इस धातुका यह इ.प है। सम्पूर्ण प्राणियोंके उत्पन्न करनेवालेका प्रसविता नाम है ॥

(८५)

एंस्कृतम् ।

वरेणैयं वरणीयं प्रार्थनीयम्, नियसादि-भिरपगतकरमपैः सततं ध्येयम् ॥ सँगैः ॥ सङ्जो आमर्दने-मृज् सर्जनं, इत्येतयोधीत्वोर्भ-जतां पापमर्जनहेतुभूतिमत्यर्थः। सा दीतावित्यस्य धातोवी सगीः तेज इत्यर्थः॥ देवस्य वृष्टिदाना-दिशुणयुक्तस्य निरतिशयस्येत्यर्थः। दीव्यते प्रका-शत्वात् ॥ धीर्महि ध्यै-चिन्तायाम्, निगसनिरुक्त-विद्यारूपेण चक्षुषा योऽसावादित्ये हिरण्सयः पुरुषः सोहिसिति चिन्तयामि ।

साषा ।

でいるからいいからいいできないないがははないがあるははははははははははははははははははははははははは

वरेण्यं वरणीय प्रार्थना करनेयोग्य है पापरहित पुरुषोंसे नियमपूर्वक सदैव ध्यानके योग्य है ॥ भूँगी:=भक्को आम-देने ' भूळ् भर्जने' इन दोनों धातुओंसे भजन करनेवालोंके पापनाश करनेका हेतु भर्ग है अथवा 'भा' धातु दीप्ति अर्थमें है इस धातुसे 'भर्ग' (तेज) बना। देवंस्य=शृष्टि-दानादि गुणयुक्त निरितशय (आनन्द) रूपका ऐसा अर्थ है। प्रकाशरूप होनेसे 'दीप्यते' शब्दका प्रयोग हुआ। धीर्महि=ध्यै धातु चिन्तन अर्थमें है इससे निगम निरुक्त विद्यारूपी नेत्रोंसे जो यह आदित्यमें हिरण्मय पुरुष है वह मैं हूँ ऐसा चिन्तन करता हूँ।

धियः इति द्वितीयावहुवचनम् ॥ यं इति
छान्दसत्वास्तिङ्गव्यत्ययः। यत्तेजः सवितुर्देवस्य वरेएयसस्माभिः अभिध्यातं भगों जपतां पापभञ्जनहेतुभूतं धीमहि उपास्महे। तत्तेजो नोऽस्माकं धियो
बुद्धीः श्रेयस्करेषु कर्मसु प्रचोदयात् प्रेरयेदित्यर्थः।
इति ॥

अगरूत्योक्तइलोदः।

को देवः सविताऽस्माकं धियो धर्मादिगोचराः। प्रेरथेत्रस्य यद्धर्गस्तं वरेण्यसुपास्महे ॥ १ ॥

भाषा।

धियः = यह द्वितीयाका बहुवचन है यः = (यत्)
छन्द होतेके कारण लिङ्ग व्यत्यय है, जो सविता देवका
तेज (भर्ग) हम सबसे प्रार्थनीय है और जप करनेवालोंके
पापके नाश करनेका हेतु है उस तेजकी हम उपासना
करते हैं। वह तेज हमे लोगोंकी बुद्धिको उत्तम कर्मोंके
करनेमें प्रेरैणा करें। इति।

जो सविता देव हमारी बुद्धियोंको धर्मादिमें लगाता है तिस सविता देवका जो प्रार्थनीय भर्गरूप तेज है उसकी हम उपासना करते हैं॥ १॥

<u> इहत्पाराशरोक्तइलोकः।</u>

संस्कृतस् ।

देवस्य सवितुर्मगों वरणीयञ्च धीसिह । तदस्साकंधियो यस्तु ब्रह्मत्वे च प्रचोदवात् ॥ १ ॥

स्कान्दीयसूतसंहितोक्तसन्त्रार्थः।

योनोऽस्माकं धियदिचत्तान्यन्तर्यासिखरूपतः । प्रचोदयात्प्रेरयेच तस्य देवस्य सुन्नताः ॥ १ ॥ दीतस्य सर्वजन्तृनां प्रत्यक्षस्य स्वभावतः । सवितुस्खात्मभूतन्तु वरेण्यं सर्वजन्तुभिः ॥ २ ॥ भजनीयं द्विजा भगेस्तेजश्चेतन्यलक्षणम् । तच्छब्दवाच्यं सर्वज्ञं जगत्सर्गादिकार्णम् ॥ ३ ॥

भाषा ।

सवितादेवका जो भगेरूप तेज वरणीय है उसका हम ध्यान करते हैं सो हमारी बुद्धिको ब्रह्मरूपमें पेरणा करै॥१॥ हेसुवतद्विजलोगो! अन्तर्यामी रूप हम सबके चित्तोंको

हेसुवर्ताद्वेजलोगों! अन्तयामी रूप हम सबके चित्तीकों प्रेरणा करता है तिस ॥ १

प्रकाशमान्, सर्वजन्तुओंमें प्रत्यक्षरूपसे स्थित सविता-रूप परमेश्वरका स्वरूप, सर्वजन्तु करके ॥ २ ॥

भजनीय, जो भर्ग तेज, चैतन्यरूप, तत् शब्दका वाच्य, सर्वज्ञ जगत्के उत्पत्तिका आदि कारण ॥ ३ ॥

स्वसायाशक्तिसंभिन्नं शिवरुद्रादिसंज्ञितम् । आदित्यदेवतायास्तु प्रेरकं परमेश्वरम् ॥ ४ ॥

आदित्येन परिज्ञातं वयं धीमद्युपास्महे । साविज्याः कथितो ह्यर्थः संग्राहेण मयाऽऽदरात्॥५॥

आग्नेयनिर्वाणतंत्रोक्तमन्त्रार्थः।

ज्यक्षरात्मकतारेण परेशः प्रतिपाद्यते । पाता हर्ता च संस्रष्टा यो देवः प्रकृतेः परः ॥ १ ॥

भाषा।

स्वमायाशक्तिसे शिवरुटादि भिन्न भिन्न रूप, सूर्य नारा-यणका प्रेरक, परमेश्वर ॥ ४ ॥

सूर्यहर्पसे ज्ञात, उसकी हम उपासना करते हैं संक्षेपसे गायत्रीका अर्थ मैंने आदरपूर्वक कथन किया है ॥ ५ ॥

ज्यक्षरात्मक तारक प्रणवहृतसे परमात्मा प्रतिपादित है जो देवप्रकृतिके परे है वही पालन करनेवाला नाश करने-वाला और उत्पन्न करनेवाला है ॥ १ ॥

असी देविस्रिलोकात्मा विगुणं व्याप्य तिष्ठति । अतो विश्वमयं ब्रह्म वाच्यं व्याहृतिसिक्षिभिः॥२॥ तार्व्याहृतिवाच्यो यः सावित्र्या क्रेथ एव सः। जगद्रूपस्य सवितुः संस्रष्टुर्वीव्यते विभोः ॥ ३ ॥ अन्तर्गतं सहद्रचों वरणीयं यतात्मिभः। ध्यायेत्तत्परं सत्यं सर्वव्यापि सनातनम् ॥ ४ ॥ यो भग्स्तर्वसाक्षी च मनोबुद्धीन्द्रियाणि नः। धर्मार्थकाममोक्षेषु प्रेरयेद्विनियोजयेत् ॥ ५ ॥

भाषा।

वही परमेश्वर तीनों लोकोंका आत्मा तीनों गुणोंमें व्यापक होकर स्थित है इस कारण विश्वमय ब्रह्म तीनों व्याहतियोंका वाच्य है ॥ २ ॥

प्रणय व्याहतिका जो वाच्य है वही गायत्री मंत्रसे ज्ञेय (जाननेयोग्य) है। जगत्रूप, सृष्टिकर्ता, विशु सविता प्रकाश करता है॥ ३॥

अन्तर्गत जो महान् तेज है वह इन्द्रियजित पुरुषोंसे वरणीय है तिस परम सत्यः सर्वन्यापी, सनातन ब्रह्मका ध्यान करे॥ ४॥

जो भर्ग सर्वसृष्टिका साक्षी है वह हमारे मन बुद्धि इन्द्रियोंको धर्म, अर्थ, काम, मोक्षमें युक्त करे ॥ ५ ॥

(90)

उन्बटभाष्यम् ।

संस्कृतम्।

तदिति षष्ट्या विपरिणम्यते, तस्य सिनतुः सर्वस्य प्रसनदातुः आदित्यान्तरपुरुषस्य देनस्य हिरण्यगर्भोपाध्यवच्छिन्नस्य ना विज्ञानानन्दस्वभानस्य ना ब्रह्मणो वरेण्यं वरणीयं भर्गः भर्गः शब्दो वीर्यवचनः वरुणाद्ध वा अभिषेचनाद्भगों- पचक्राम वीर्यं वे भर्ग इति श्रुतिः । तेन हि पापं भृञ्जान्ति वहन्ति, भृजीभर्जने अथवा भर्गस्तेजोवचनः यद्वा मण्डलं पुरुषो रद्दमय इत्येतिच्चत्यमभिन्नेयते देवस्य दानादिगुणयुक्तस्य

भाषा ।

तत् शब्द पष्टचर्थमें है तिस सविताका अर्थात् सबके उत्पन्न करनेवाले सूर्यके अन्तर्गत पुरुष देवका अर्थात् हिर-ण्यगर्भोपाध्यविच्छन्न विज्ञानानन्दस्वरूप ब्रह्मका वरणीय रूप भर्ग है भर्ग शब्द वीर्यवाची है भर्गका प्रभव वरुण अथवा अभिषेचनसे हुआ। निश्चय करके वीर्यही भर्ग है यह श्रुति है तिससे पाप नष्ट होते हैं भृजीधातु भर्जनार्थक होनेसे

भर्ग तेजोवाची है अथवा मण्डलं, पुरुषं, और किरणं यह तीनों भर्गशब्दसे कहेगये हैं; देव दानोदिग्रणयुक्त का हम

धीसि । ध्येचिन्तायाद, अस्य च्छान्दसं लस्प्रसार-णस्, ध्यायासः चिन्तयासः निदिध्यालं तद्विषयं कुर्स इति यावत् धियो योनः धीशव्दो वृद्धिवचनः कर्सवचनो वा वाग्वचनश्च वृद्धीः कर्सीण वा वाचो वा यः सविता नोऽस्माकं प्रचोदयात् यस्तविता देवः नोऽस्माकं धियः कर्माणि धर्मा-दिविष्या वा बुद्धीः ''प्रचोदयात्" प्रेरयेत् "तत्" तस्य-चुदसश्चोदने प्रकर्षण चोदयति प्रेरयति तस्य सवितः सम्बन्धि वीर्यं तेजो वा ध्यायाम इति

भाषा ।

ध्यान करते हैं 'ध्ये' धातु चिन्तन अर्थमें है, वैदिक प्रयोग होनेसे इसका सम्प्रसारण है ध्यान करते हैं (चिन्तन करते हैं) अर्थात् ब्रह्मविषयका निदिध्यासन करते हैं। 'धियो योनः' यहां धीशब्द बुद्धिवाची वा कर्मवाची वा वाकाची है इस लिये जो सूर्य हमारी बुद्धि, कर्म वा वाणीकी प्रेरणा करता है। जो सविता देव हमारी बुद्धिको धर्मादि कर्योंमें प्रेरणा करता है तिसके। ' चुदू' धातु-प्रेरणार्थक है जो अच्छी तरहसे प्रेरणा करे तिस सविता देव सम्बन्धी वीर्य वा तेज (भर्ग) का

सम्बन्धः वाक्यभेदेन हा योजना। तस्सवितुर्वरणीयं वीर्यं तेजो वा देवस्य ध्यायामः यद्य बुद्धीः प्रची-दयात् प्रेरयत्यस्माकं तं च ध्यायामः स च सवितेव भवति। लिङ्गव्यत्ययेन वा योजना, तस्तवितु-र्वरणीयं भगों देवस्य ध्यायामः धियो यद्धर्गः अस्माकं प्रेरयति॥

सायनभाष्यम् ।

सर्वासु श्रुतिपु प्रसिद्धस्य देवस्य द्योतमानस्य-सवितुः । सर्वान्तर्यामितया प्रेरकस्य जगत्त्रष्टुः

भाषा ।

हम ध्यान करते हैं यह सम्बन्ध है। अब वाक्यभंद करके योजना करते हैं उस सिवता देवके वरणीय वीर्य वा तेज-का हम ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धिकी प्रेरणा करता है जो अर्ग हमको प्ररणा करता है तिसका हम ध्यान करते हैं वह अर्ग सिवताही है। अथवा लिङ्ग व्यत्यय करके यह योजना है तिस सिवता देवके वरणीय भर्गका हमध्यान करते हैं जो भर्ग हमारी बुद्धिको प्ररणा करता है। सबश्चतियों भें भिसद्ध, प्रकाशमान, सर्व अन्तर्यामी, रूपसे प्रेरक, जगतकी रचनाकरनेवाला, सिवताहूप,

ल्ल्कृतस् ।

आत्मभूतं वरेण्यं सर्वेरियास्यतया ज्ञेयतयां च सम्भजनीयम्॥ भर्गः—अविद्यातत्कार्य-योर्भर्जनान्हर्गः स्वयंज्योतिः परब्रह्मात्मकं तेजः थी-महि तचोहं सोऽसी,योऽसी सोहमिति वयं ध्यायेस॥ (यद्वा) तदिति भर्गो विशेषणम्, सवितुर्देवस्य तत्तादृज्ञं भर्गः धीसिह किं तदित्यपेक्षायासाह । य इति लिङ्गदेयत्ययः यद्भगों धियः प्रचोदयादिति तज्ज्ञायेसेति समन्वयः॥

भाषा ।

परमेश्वरका आत्मरूप (वरेण्य) सब करके उपासनीय जानने और भजन करने योग्य भर्ग है अज्ञान और तिसके कार्यको ज लानेके कारण भर्ग स्वयं ज्योति परब्रह्मरूपात्मकतेज है। तिसका ध्यान करते हैं जो मैं हूँ सो वह है जो वह है सो में हूँ इस प्रकार हम ध्यान करते हैं । अथवा 'तत् यह अर्गका विशेषण है सविता देवके तिस परब्रह्मके सदश भर्गका ध्यान करता हूँ तिस किस इसको कहते हैं 'य' 'यह' लिङ्ग व्यत्यय है जो भर्ग हमारी बुद्धिको प्रेरणा कर-ताहै तिस भर्गका ध्यान करते हैं यह समन्वय है।

(यद्वा)यः लिवता लूयां धियः कर्माणि प्रचो-दयात् प्रेरयति तस्य लिवतुः सर्वस्य प्रसवितुदेवस्य चोतमानस्य लूर्यस्य तत् सर्वेर्द्रयमानतया प्रसिद्धं, वरेण्यं सर्वेः भजनीयं भर्गः पापानां तापकं तेजो-सण्डलं, धीमहि ध्येयतया मनसा धारयेम ।

रावण भाष्यस् ।

तत् तस्य अर्गस्तेजः धीसिह ध्यायेसः चिन्तयासः अत्र यद्यपि तदिति पदं अगों विशेषणं नास्ति तथापि तच्छददप्रयोगादेव यच्छद्दप्रयोगो स्टभ्यते तस्य

आषा ।

जो सूर्य कमोंको प्ररणा करते हैं उस सविता (सर्वो-त्पादक) देव (प्रकाशमान) सूर्यके तत् (वह) सर्वलो-कसे प्रत्यक्ष होनेके कारण प्रसिद्ध वरेण्य (सर्वजनोंसे उपा-सना करने योग्य) भर्ग (पापोंके नाश करनेवाला) तेजो-प्रण्डलको ध्येय रूपसे मनसे हम धारण करते हैं।

तिस भर्गतेजका में चिन्तन करता हूँ यहींपर इस यन्त्रमें तत् पद भर्गका विशेषण नहीं है तिसपर भी तत् शब्दके प्रयोगसे यत् शब्दकी उपलब्धि होती है। तिसका

कस्य "सिवतुः" सर्वभावानां प्रसिवतुः । पुनः किंशृतस्य "देवस्य" द्यितकीडादियुक्तस्य तं कं यो
भगीं नोऽस्माकं धियो वुद्धीः प्रचोदयात् प्रेरयतीत्यर्थः । तिदह भगेशब्देन वहुविधमाहात्म्यसुक्तम् ।
सिवतृमण्डलगतादित्यदेवतास्वपुरुष उच्यते ॥
अत्र यद्यपि सिवतुर्भर्ग इति सिवतृभर्गयोभिन्नता
गायत्रीयन्त्रे प्रतीयते तथापि परमार्थविन्तायां
सिवतृभर्गयोभेदो न विद्यते एव । स एवसविता
स एव भगः सिवतृभर्गयोःअद्वैतमेव तथा च राहोः

भाषा।

किसका सविताका=सब भावों के उत्पन्न करनेवालेका फिर कैसा है वह सविता क्रीडादियुक्त है । सो कौन जो भर्ग हमारी बुद्धिकी प्रेरणा करता है यहां तिस भर्ग शब्दसे बहुत प्रकारका माहात्म्य कहा गया है वह भर्ग सूर्य मण्ड-लमें (ब्यापक) पुरुष कहा गया है।

यद्यपि इस गायत्री मन्त्रमें सविता और भर्गकी शिक्षता प्रतीत होती है तथापि परमार्थ विचारमें । स्विता और भर्गमें भेद नहीं है वही सविता है वही भर्ग है सविता और भर्ग एकरूप है जैसा कि राहों: शिरः (राहुका शिर) अर्थात राहुही शिर है यहां प्रष्टी

शिर इतिवत् षष्ठी त्वभेदसाधिका पुनरिप कि भूतं भर्गः वरेण्यं प्रवरणीयं प्रार्थनीयम्, जन्ममृत्युदुःख-नाशाय ध्यानेन उपासनीयमित्यर्थः। एवं गायन्या-स्तस्य च महात्स्यमुपवर्ण्य पुनस्तस्यैव महाप्रभावतं महाव्याहृतिभिर्विशेषणीभूताभिर भिषीयते तद्यथा कि भूतं भर्गः भूरादि व्याप्य तिष्ठन्त मिति शेषः। तथा च भूरादि त्रेलोक्य प्रकाशकम्। भूर्भू-मिलोकः भुवः भुवलोंकः अन्तरिक्षं, स्वःस्वलोंकः

भाषा ।

विभक्ति अभेद सम्बन्ध साधिका हुई है वैसाही यहां भी है। (तथा राहुके शिरके समान पष्टी विभक्ति भेदका साधक नहीं है)। फिर भी किसमकारका वह भगे है। वरणीय है अर्थात प्रार्थनीय है जन्म, मृत्युरूप दुःखोंके नाशके लिये ध्यान पूर्वक उपासना करनेयोग्य है। इस प्रकारसे गायत्री मन्त्रका माहात्म्य वर्णन करके फिर तिसीका महाप्रभाव महान्याहृतिद्वारा विशेषरूपसे कहते हैं किस प्रकारका वह भगे है भु आदि लोकोंमें ज्यापक होकर स्थित है तथा भू आदि तीनों लोकोंका प्रकाशक हैं भू: 'भूमिलोक 'भुवः' अन्तरिक्षलोक, स्वः स्वर्गलोक,

(90)

संस्कृतम्।

प्वसुपर्युपरिक्रसेणावस्थितान् लोकानिशक्वाच्या-विष्ठसानोऽली भर्गः एताँ हीं होकानव वत् प्रकाशयतीत्यर्थः॥

सहीधरभाष्यस्।

तदिति षष्टयथें तस्य देवस्य चोतनात्मकस्य सविदुः . शेरकंस्यान्तर्यासिणो विज्ञानानन्दस्वसावस्य हिर-ण्यगभोंपाध्यविकन्नस्य वा आदित्यान्तरपुरुषस्य, वा ब्रह्मणो वरेण्यं वरणीयं सर्वैः प्रार्थनीयं र्श्वरापानां सर्वसंसारस्य च भर्जनसमर्थं

आषा।

इसीमकार क्रमसे ऊपर ऊपर स्थित तीनों लोकोंमें परिपूर्ण होकर अर्ग स्थित है अर्थात् इन तीनों लोकोंका पदीपवत् मकाशक है।

'तत्' यह षष्ठी अर्थमें है तिस प्रकाशमान प्रेरक अन्त-र्यामी विज्ञानानन्दस्वरूप हिरण्यगर्भोपाधिमें स्थित सूर्य-यण्डलके अन्तगत पुरुषक्ष ब्रह्मका वरणीय नास सबसे प्रार्थनीय जो भर्ग अर्थात् सर्व पापों तथा सर्व संसारके नास

सत्यज्ञानानन्दवेदान्तप्रतिपाद्यं वयं धीमहि ध्यायान् मः,छान्दस सम्प्रसारणम्, यद्वा मण्डलं पुरुषो रद्रम-य इति त्रयं भर्गःशब्दवाच्यम्, भर्गो वीर्यं वा वरुणाद्धवा अभिषिचानाद्रगोंऽपचकाम वीर्यं वे भर्ग इति श्रुतेः तस्य कस्य यस्सविता नोऽस्माकं धियः बुद्धीः कर्माणि वा प्रचोदयात् वा प्रकर्षेण चोदयति प्रेरयति सत्कर्मानुष्ठानाय। यद्वा वाक्य भेदेन योजना-सवितुर्देवस्य वरेण्यं भर्गो ध्या यासः यद्म नो बुद्धीः प्रेरयति तं च ध्यायामः स

भाषा ।

करनेमें समर्थ वेदान्तद्वारा वर्णित सत्यज्ञानानन्दस्वरूप तेजका हम ध्यान करते हैं वैदिकप्रयोग होनेसे सम्प्रसारण है। अथवा मण्डल, पुरुष, किरण ये तीनों अर्गशब्दके वाच्य हैं अथवा अर्ग वीर्यक्षप है (वा वरुणक्षपसे सर्वको सिश्चन करनेसे अर्ग वीर्यको कहते हैं—"निश्चयकरके भर्ग वीर्य है" ऐसी श्रुति है) तिसका किसका ? जो सविता हमारी बुद्धि बा:कमोंमें पेरणा करता है अथवा सत्कर्मों के अनुष्ठानमें अलीआंति लगाता है अथवा वाक्यभेदसे योजना करते हैं। उस सविता देवके वरणीय भर्गका हम ध्यान करते हैं जो सविता हमारी बुद्धिकी प्ररुणा करता है तिसका

च सिनतेव। लिङ्गव्यत्ययेन वा योजना, सिनतुर्दे-वस्य तद्भगों भीमाहि यो यद्भगों नो युद्धाः प्रेरयाति॥

श्रीमच्छड्डरसाज्यस् ।

तत्र शुद्धगायत्रीप्रत्यग्वह्मैक्यवोधिका । वियो यो नः प्रचोदयादिति नोऽस्माकं धियो बुद्धीः यः प्रचोदयात् प्रेरयेदिति सर्वबुद्धिसंज्ञांतः-करणश्रकाशकसर्वसाक्षी प्रत्यगात्मेत्युच्यते । तस्य प्रचोदयात् शब्दनिर्दिष्टस्यात्मनः स्वद्धप-सूतं परं ब्रह्म तत् सवितुरित्यादिपदैर्निर्दिश्यते ।

भाषा।

हम ध्यान करते हैं वह सविता ही है। लिङ्गव्यत्यय करके योजना करते हैं। सविता देवके तिस अर्गका हम ध्यान करते हैं जो अर्ग हमारी बुद्धिकी प्रेरणा करता है॥

तहां ग्रुद्ध गायत्री जीवात्मा और ब्रह्मके एकताका बोचक है। 'धियो यो नः प्रचोदयात' अर्थात् जो हमारी बुद्धिको प्ररणा करता है, अर्थात् सर्व अन्तःकरणका प्रकाशक, सर्वका साक्षी प्रत्यगात्मा कहा जाता है, तिस प्रचोदयात् शब्द करके कथित आत्माका स्वक्ष्प परब्रह्म 'तत्सिवितुः' इत्यादि पदोंसे कथित है। तहां पर

तत्र "ओं तत्सदितिनिर्देशो ब्रह्मणिश्वविधः स्मृत" इति तच्छब्देन प्रत्यग्भूतं स्वतः सिद्धं परंब्रह्मोच्यन्ते । सिवतुरिति सृष्टिस्थितप्रलयलक्षणकस्य सर्व-प्रपंचकस्य समस्तद्वेतिविश्रमस्याधिष्ठानं लक्ष्यते, वरेण्यमिति। सर्ववरणीयं निरितशयानन्दरूपम्। भर्ग इत्यविद्यादिद्योषभर्जनात्मकज्ञानैकविषयत्वम्। सेवतुर्देवस्यत्यत्र पष्ट्ययो राहोःशिरोवदौपचारिक-वृद्धयादिसर्वदृश्यसाक्षिलक्षणं यन्मे स्वरूपं तत्स-वृद्धयादिसर्वदृश्यसाक्षिलक्षणं यन्मे स्वरूपं तत्स-वृद्धयसाक्षिलक्षणं यन्मे स्वरूपं तत्स-वृद्धियस्य यह ब्रह्मवेति परमानन्दिसरत्समस्तानर्थक्रपं भाषा।

उन् तत्सत् यह ब्रह्मक तान प्रकारक नाम ह, तत् शब्दस सब भूतोंमें स्थित स्वतः सिद्ध परब्रह्म कहा जाता है। सविता यह उत्पन्न, पालन, प्रलयः लक्षण वाला सर्व प्रपंचका तथा सर्व द्वैत भ्रमका अधिष्ठान है। 'वरेण्यं' यह सबसे प्रार्थनीय और परमानन्दरूप है 'भर्ग' यह अज्ञानादिदोषोंका नाशक ज्ञानरूप है 'देव-स्य'यह सर्वका प्रकाशरूप अखण्ड, चैतन्य, एकरस देव है। 'स्वितुदेंवस्य' यहां पर षष्ठीका अर्थ "राहोः शिरः" की भांति औपचारिक है। बुद्धचादि सर्व दृश्य पदार्थोंका साक्षी रूप जो मेरा स्वरूप है तिस सर्व-अधिष्ठान परमा-

संस्कृतन्।

त्वप्रकाशचिवात्सकं ब्रह्मेत्येवं धीसिह ध्यायेस । एवं सित सह ब्रह्मणा स्वविवर्तजडप्रपञ्चेन रज्जुसंपन्यायेनापवादः ।

समानाधिकरण्यरूपमेकत्वं लोऽविमितिन्यायेन सर्वसाक्षिप्रत्यगात्मनो ब्रह्मणा सह तादात्म्य-रूपेप्रकृतंव भवतीति सर्वात्मक्रब्रह्मगोषकोऽयं गायत्रीमन्त्रः सम्पचते, त्रिमहाञ्याहृतीनामय-मर्थः भूरिति सन्मात्रमुच्यते, सुवइति सर्वं भाष-यति प्रकारायतीति व्युत्पत्त्या चिद्रूपसुच्यते। सुन्नियते इति व्युत्पत्त्या स्वरिति सुष्ठु सर्वेर्नियमा-णसुखस्बरूपसुच्यत इति।

माषा।

नन्द सर्वअनर्थरित स्वयंप्रकाश चैतन्यरूप ब्रह्मका हम ध्यान करते हैं। इस प्रकार ब्रह्मके साथ तथा उसीके विवर्तरूप जड़ प्रपंच करके रज्जुसर्प न्यायसे अपवाद है। अर्थात् एक अधिकरण होनेसे एकरूपता है। 'सोयं' इस न्यायसे सर्वसाक्षी प्रत्यक आत्मा (जीवात्मा) का ब्रह्मके साथ एकरूप होनेसे एकता सिद्ध है, इसप्रकार गायत्रीमंत्र सर्वस्वरूप ब्रह्मका बोयक है। तीन महान्याहतियोंका यह अर्थ है='सूः' इस शब्दसे सत्रूप ब्रह्म है, 'सुवः' सर्वस्व-ष्टिका प्रकाश करता है, इस व्युत्पत्तिसे चैतन्यरूप कहा जाताहै। 'स्वः' अस्तिप्रकार सबसे प्रार्थित सुखद्भप आनन्द कहा जाता है।

विद्यारण्यस्वामिकृतमन्त्रार्थः।

संस्कृतम्।

तिहिति वाद्धानोगम्यं ध्येयं यत्सूर्यमण्डले । सिवतुः सकलोत्पत्तिस्थितिसंहारकारिणः ॥ १ ॥ वरेण्यमाश्रयणीयं यदाधारिमदञ्जगत् । अर्गस्स्वसाक्षात्कारेणाविद्यातत्कार्यदाहकम् ॥ २ ॥ देवस्य द्योतमानस्य ह्यानन्दात्कीडतोऽपि वा । धीमह्यहं स एवेति तेनैवाभेदिसद्धये॥ ३ ॥

भाषा ।

तत्=वाणी और मनसे अगोचर जो सूर्यमण्डलमें ध्यान करने योग्य है। सविद्यः=सकल लोकोंका उत्पत्ति, पालन और संहारका कारण है॥ १॥

वरेण्यम्=सबके आश्रय छेनेयोग्य नो इस जगत्का आधार है। भर्गः=अपने स्वरूपको साक्षात् करनेसे अविद्या और उसके कार्यका नाजक है ॥ २॥

देवस्य=प्रकाशमान् वा आनन्दरूपसे क्रीडा करनेवाला । धीमहि=हम निश्चयें करके वही परमात्मा ब्रह्म हैं इस अभेद्सिद्धिके लिए ॥ ३ ॥

धियोन्तःकरणवृत्तीश्च प्रत्यवप्रवणचारिणीः । य इत्यिलिङ्गधर्मं यत्सत्यज्ञानादिलक्षणम् ॥ ४॥ नोऽस्माकं वहुधाभ्यस्तिमञ्जसेददृशां तथा ॥ प्रचोदयात्प्रेरयतु प्रार्थनेयं विचार्यते॥ ५॥

सङ्गोजिदीक्षितिवरचितगायत्री-भाष्यस्।

तिदिति—षू प्रेरणे । सुवित प्रेरयतीति सविता-सूर्यः तत्सम्बन्धिः सूर्यमण्डलावच्छिन्नभिति यावत् ।

भाषा ।

थियः=अन्तःकरणकी वृत्ति अर्थात् प्रत्यगात्मा (जीवा-त्माके) सन्मुख चलनेवाली (बुद्धि) यः=यहां लिङ्ग व्यत्यय है, जो सत्य, ज्ञान और आनन्दरूप है ॥ ४॥

नः=हसारी बहुत प्रकारके अभ्यासोंसे भिन्न २ भेद देख-नेवालोंकी, प्रचोदयात्=प्रेरणा करे । यह प्रार्थना है ॥ ५ ॥

तिदिति-षू=धातु प्रेरणार्थमें है सबको प्रेरणा करनेवाला सविता अर्थात् सूर्यमण्डलमें व्यापक तेज है।

दीव्यतीति देवः परमात्मा तस्य वरेण्यं सर्वेभेजनी-थम् । वृञ् एण्यः । अविद्याकामकर्मादिसर्जना-इर्गः । स्वरूपात्मकं ज्योतिः धीमहि तदेवाहिमिति तहासोऽहिमिति वा ध्यायेम । यः देवः नः अस्माकं धियः बुद्धीः प्रचोदयात् प्रेरयतीत्यर्थः । बाहुलका-छडथें लेट् । लेटोऽडाटौ इत्याडागमः । श्रूः सुवः स्वः एते त्रयो लोका अपि ॐब्रह्मैवेति ।

आषा।

जो सबको प्रकाश करै वह देव परमात्मा है तिस पर-मात्माका सब करके चिन्तन योग्य तेज है, एण्य प्रत्यय युक्त वृज् धातुसे सिद्ध 'वरंण्यम्' सिद्ध होता है। अज्ञान काम कर्मादिका नाशक होनेसे भर्म आत्मस्वरूप ज्योति है उसका में ध्यान करता हूँ (अर्थात्) वह परमात्मा मैं हूँ वा उस परमात्माका दास (अधीन) हूँ ऐसा ध्यान करता हूँ, जो देव हमारी बुद्धिको प्रेरणा करता है। 'बाहुलका-छुडथें लेट्। लेटोउडाटी' इस सूत्रके अनुसार आट्का आगम हुआ। भूः, भुवः, स्वः यह तीनों व्याहृतियाँ तीनों लोक हैं ॐकार ब्रह्मरूप है। इति।

(904)

ब्रह्राजसान्यस्।

संस्कृतम्।

नित्यसन्त्रो व्याख्यायते। तच्छव्दशुतेर्यच्छब्दोः ऽध्याहारार्थः। सवितुः जगतां प्रसवितुः। सविता वै प्रसवानामीशे। उत्तमे शिषे प्रसवस्य त्वसेकः-इत्यादिश्रुतेः। वरेण्यस्"वृज् सन्मक्ती"एण्यञ्रत्ययः सर्वेषां सम्भजनीयम्। भर्गस्तेजः अञ्जनाद्धर्गः प्रका-शप्रवानेन जगतो बाह्याभ्यन्तरतसोसञ्जकत्वाद्धर्ज-नाद्वा कालात्मकतया सकलकर्मफलपाकहेतुत्वाद्ध, रणाद्रा वृष्टिप्रदानेन भूतानां भरणहेतुत्वात्। देवस्य

भाषा ।

नित्यमंत्र गायत्रीकी व्याख्या करता हूँ। तत् शब्दके श्रवणसे यत् शब्दका प्रहण है। सवितुः जगत्को उत्पन्न करनेवाला सविता सर्वसृष्टिका स्वामी है।

हे सूर्य ! आप सृष्टिके एक उत्पन्न करनेवाले हो-यह श्रुति है वरेण्यम्=एण्य प्रत्यय युक्त वृत्र् धातु सस्यक्प्रकारके अक्त्यर्थमें है, अर्थात् सब प्राणियोंके चिन्तन योग्य है। भर्गः=भर्ग तेज है जगत्के बाहर भीतर प्रकाश अंधकारका नाशक है वा सर्वजगत्का अझन (संहार) करनेसे भर्ग नाम है।

(१०६) गायत्रीयन्त्रार्थभास्करः।

संस्कृतम्।

योतमानस्य भीमहि चिन्तयामः, ध्ये चिन्तायाम् देवस्य सवितुर्वरेण्यम् । यद्भर्गस्तद्धवायामः आदि-त्यमण्डलान्तर्वर्तिनं तेजोमयं पुरुषमनुचिन्तयामः यएषोन्तरादित्ये हिरण्मयः पुरुषः अथ य एष एत-स्मिन्मण्डलेचिषि पुरुष इत्यादि श्रुतेः धियो यो नः सविता अस्माकं धियः हानोपादानविषयाणि ज्ञानानि प्रचोदयात् प्रचोदयति प्रवर्तयति तत्सवि-तुस्तद्भर्गिरिचन्तयाम इति ॥

आषा।

वा कालक्षपसे सर्व कर्यों के फलों के परिपाकका कारण होनेसे भर्ग है। वा वृष्टिप्रदानसे प्राणियों के पालनका हेतु होनेसे भर्ग है। देवस्य=प्रकाशमानका धीमहि=चिन्तन करता हूँ ध्ये धातु चिन्तन अर्थमें है सविता देवका वरणीय जो भर्ग है उस भर्गका चिन्तन करता हूँ अर्थात् सूर्यमण्डके भीतर वर्तमान तेजोमय पुरुषका चिन्तन करता हूँ। जो यह प्रत्यक्ष सूर्यमण्डलके भीतर :हिरण्यय पुरुष है और जो यह इस तजोक्षप मण्डलमें प्रत्यक्ष पुरुष है यह (श्रुति) है धियो यो नः=जो सविता हमारे त्याग प्रहण विषयक ज्ञानोंकी प्ररणा करता है उस सविता देवके तिस भर्गका मैं ध्यान करता हूँ। इति।

तारानाथतकेवाच्रप्रकुक्त-गायत्रीवाक्यार्थः।

संस्कृतम् ।

सवितुदंवस्य भगिष्यं परम्ब्रह्मस्वरूपं तेजः चि-नतनीयं सम हृत्पद्मस्थितेनैवभगीष्येन तेजसा प्रेर्य-माणस्तदेव भलीकान्तरिक्षलोकस्वर्गलोकादिब्रह्मा-ण्डोदरवृत्ति सचराचरत्रैलोक्यस्वरूपं सस हृदय-सध्ये वाह्ये च सूर्यमण्डले वर्तमानतेजसा एकीभूतं परब्रह्मस्वरूपं ज्योतिरहमिति चिन्तयञ्जपं कुर्य्या-दिति गा० व्या०॥

आषा ।

सविता देवका अर्गनामक परब्रह्मस्वरूप तेज चिन्तन करनेयोग्य हमारे हृदय-कमलमें स्थित, अर्गनामक तेजसे प्रीरत है, वही भूलोक, अन्तरिक्षलोक, स्वर्गलोकादि ब्रह्माण्डके भीतर वर्तमान चराचर बैलोक्य स्वरूप हमारे हृदयमें, वाहर और सूर्यमण्डलमें वर्त्तमान तेज द्वारा एक रूप परब्रह्मस्वरूप ज्योति मैं हूँ ऐसा चिन्तन करता हुआ जप करें।

विष्णुधर्मोत्तरोक्तमन्त्रवर्णार्थः।

संस्कृतस् ।

कर्तेन्द्रियाणि पञ्जैव पञ्च बुद्धीन्द्रियाणि च। पञ्चबुद्धीन्द्रियार्थाश्च भतानां चैव पञ्चकम्॥१॥ सनोबुद्धिस्तर्थेवात्मा अञ्यक्तश्च यदुक्तमम्। चतुर्विशाति एतानि गायत्र्या अक्षराणि च॥ प्रणवं पुरुषं विद्धि सर्वग पञ्चविशकम्॥ ॥॥

निष्कर्षः।

यत्प्रकाशात्मकोत्पत्तिस्थितिलयकारणसूर्यमण्ड-लान्तर्गतमोङ्कारवाच्यसिचदानन्दलक्षणिचन्तनी-

आषा।

पांच कर्म इन्द्रिय, पांच ज्ञान इन्द्रिय, पांच ज्ञानइन्द्रि-योंके विषय आकाशादिक पांच महाभूत ॥ १ ॥

यन, बुद्धि जीवात्मा और जो इन कार्योंसे श्रेष्ठ कार-णक्षप अन्यक्त ह यह चौबीस गायत्रीके अक्षर (क्षप) हैं। सर्व चराचरमें जो न्यापक प्रणवक्षप पुरुष है उसकी पद्मीसवाँ जानो ॥ २ ॥

जो प्रकाशरूप उत्पत्ति, स्थिति, लयका कारण सूर्य-मण्डलके अन्तर्गत ॐकारका वाच्य सचिदानन्दरूप

याविद्यादिदोषभर्जनसम्धेब्रह्मात्सकं तेजः, यञ्चा-स्महुं छिवृत्तिनियामकमन्तःकरणाविच्छक्तप्रत्यगा-त्मभूतकूटस्थलक्षणं त्वात्मतेजः, तत्परेहाजीवयो-र्छक्ष्यभूत ब्रह्मात्मैकभावं चिन्तयामः॥

सावार्थः ।

गायत्रीसंत्रप्रतिपाचस्य प्रणववाच्यवहात्वविव-क्षया तदादौ प्रणवोच्चारणम् ॥ १ ॥

भाषा ।

चिन्तन करने योग्य, अविद्यादिक दोषोंके नाशकरनेमें समर्थ ब्रह्मरूप तेज है पुनः जो हमारी दुद्धिवृत्तिका प्रेरक अन्तः करणमें ज्यापक प्रत्यगात्म कूटस्थरूप आत्मतेज है। उस परमेश्वर और जीवका लक्ष्यभूत अर्थात् ब्रह्म और आत्माके एकरूपका हम चिन्तन करते हैं।

गायत्रीसन्त्रसे प्रतिपाद्य देवको प्रणववाच्य ब्रह्मरूप कहनेकी इच्छा करके तिस गायत्रीके आदिमें प्रणवका उश्चारण है ॥ १ ॥

ॐ भूर्भुवः स्वः तिहितिशब्देभ्यो ह्युत्तमाधिका-रिण प्रति प्रणववाच्यं त्रैलोक्योपलक्षितसकलावि-चकस्याधिष्ठानभूतं तद्विद्याण्डोपरिस्थतत्पद-लक्ष्यभूतसर्वपरिच्छेदरिहतसीचेदनन्तानन्दलक्षणं गुद्धं ब्रह्मोपदिशति॥ २॥

तथा-सवितुर्वरेण्यं भगों देवस्य धीमहीतिशब्दे-भ्यो मध्यमाधिकारिणं प्रति प्रकाशमानोत्पत्ति-स्थितिलयकारणसिवतृमण्डलान्तर्गतिचिन्तनीय-भर्गाख्यसायोपहितचैतन्येश्वरज्ञानमालक्ष्य तदुपा-सनां दर्शयति ॥ ३॥

आषा ।

ॐ धूर्भुवः स्वः तत् इन शब्दोंसे उत्तमाधिकारीके प्रति प्रणवका वाच्य त्रैलोक्य करके उपलक्षित सर्व अविद्या-सम्बन्धी कार्योंके अधिष्ठानरूप और तिस अविद्याके कपर स्थित तत्पदका लक्ष्यभूत सर्वपरिच्छेदसे रहित सच्चिदनन्तानन्दरूप गुद्ध ब्रह्मका उपदेश है ॥ २ ॥

तथा-'सिवर्तुवरेण्यं भगों देवस्य धीमहि' इन शब्दोंसे मध्यमाधिकारीके प्रति प्रकाशमान, उत्पत्ति, स्थिति, खयका कारण, सूर्यमण्डलके अन्तर्गत चिन्तनीय भर्ग-नामक सायोपहित चैतन्य ईश्वर ज्ञानका लक्ष्य करके तिस ईश्वरकी उपासनाको दर्शाया है ॥ ३ ॥

संस्ङ्तम् ।

तथा धियो यो नः प्रचोदयादिति विद्योपाधिविशिष्टचेतनकूटस्थलक्षणजीवात्सज्ञान-मालक्ष्य निकृष्टाधिकारिणं प्रति कर्मकाण्डं प्रद-र्शितस्॥ ४॥

एवसुपाधिसेदैश्चिविधं ब्रह्म निर्दिष्टस् । तदु-पाधिनिर्मुक्तसेकसेव लक्ष्यते । तथाऽधिकारिभेदैः कर्मादि त्रिविधं सूचितम्। एवं तज्जपतद्र्थभाव-नयोः परिपाकादहंवृत्तितिरोभावपूर्विका केवलच्ये-याकारा वृत्तिरुदेति तदा जीवन्सुक्तो भवति ॥५॥

याचा ।

तथा 'धियो यो नः प्रचोदयात्' इन शब्दोंसे अविद्या उपा-थियुक्त चैतन्यकूटस्थरूप जीवात्माके ज्ञानको लक्ष्य करके निकृष्ट अधिकारीके प्रति कर्मकाण्डको दर्शाया है ॥ ४ ॥ इस प्रकारसे उपाधिके भेदसे तीन प्रकारका ब्रह्मभेद कहागया है तिन उपाधियोंसे निर्मुक्त एकही ब्रह्म लक्षित है। तथा अधिकारी भेद्से कर्म, उपासना, ज्ञान, तीन प्रकारसे सूचित किया गया है। इस प्रकार गायत्रीका

जप और उसके अर्थकी भावनाकी परिपकतासे अहम् इस वृत्तिके अभावपूर्वक केवल ध्येयाकार (ब्रह्माकार) वृत्ति उदय होती है. तब जीवन्मुक्त होता है ॥ ५ ॥

एतन्सन्त्रेण भगवन्नेताद्दक्परसार्थभूतं त्वां वयं चिन्तयान्नोऽस्महुद्धिधर्मादिषु प्रेरचित्वित जीवः प्रार्थयते ॥ ६ ॥

परश्च- यन्मनिस सङ्कल्पादिक तहुद्धिर्निश्चिनो-ति तदेव जीवात्मेन्द्रियद्वारा करोतीतिनियमाचदा तत्त्रार्थनाभिः प्रसन्नेशो धर्मभागे बुद्धि प्रवर्त्तये तदा तदनुकस्पितो जीवः शुभकार्य्य करोति तेन

भाषा ।

हे अगवत्! इस गायत्री मन्त्रसे ऐसे परमार्थक्रप आपका मैं चिन्तन करता हूँ । हमारी बुद्धिको धर्मादिविषयों में आप प्रेरणा करें इस प्रकार जीव प्रार्थना करता है ॥ ६ ॥

फिर भी जो मनसे संकल्पादिक होते हैं उनको बुद्धि निश्चय करती है और जो बुद्धि निश्चय करती है उसीको जीवात्मा इन्द्रियद्वारा करता है । इस नियमसे जब तिस प्रार्थनासे प्रसन्न परमेश्वर धर्ममार्गमें बुद्धिकी प्रेरणा करता है, तब तिस परमेश्वरकी दया करके युक्त जीव ग्रुम कार्यको करता है । तिस ग्रुम कार्यके करनेसे

(११६)

संस्कृतम् ।

त्तकलबुरितक्षयपूर्विका दृढ़तरा परा भक्तिर्जायते ततो विक्षेपशसनपूर्वकं परसात्मकानं स्वयसुदेति। तत आवरणक्षयाजीवन्सुक्तो भवति । तस्सादतः परा श्रेथस्करोपासना नास्त्येवेति॥ ७॥

अत्र वाणप्रस्थादीनां तु तन्मंत्राचन्तस्थब्रह्मा-त्तकप्रणवाभ्यां मध्येऽपि "आदावन्ते च यक्नास्ति वर्तमानेऽपि तत्तथा॥" सर्पादौ रज्जुतत्तेव ब्रह्मसत्ते-व केवलस्" प्रपञ्चाधाररूपेण वर्ततेऽतो जगन्नहि

THE PROPERTY OF THE PROPERTY OF STATES OF STAT

भाषा।

सकल पापसय पूर्वक दृढतर परा भक्ति टत्पन्न होती है, तब विक्षेपके नाश होनेसे परमात्माका ज्ञानस्वयं उद्य होता है तिसके अनन्तर आवरणके क्षय होनेसे जीवन्मुक्त होता हैं इस कारणसे उस गायत्रीकी उपासनाके परे कोई कल्याणदायी उपासना नहीं है ॥ ७ ॥

इस मन्त्रमें बाणप्रस्थादिकोंको इस मन्त्रके आदि अन्तमें स्थित ब्रह्मरूप प्रणविक होनस मध्यमें भी कहा है। "जो आदि अन्तमें नहीं है वह वर्तमान कालमें भी नहीं है सर्पादिकोंके भ्रममें जैसे रज्जुसत्ता है उसी प्रकार सब प्रपञ्चमें ब्रह्म सत्ताही है॥" प्रपञ्चोंके आधाररूपसे ब्रह्म

(११४) गायत्रीमन्त्रार्थसास्करः।

संस्कृतम् ।

इत्यादिवावयेभ्योऽन्यथाऱ्यातिसायिकभेदानिरस-नपूर्वकेण ब्रह्मैव सूचितस्भवति ॥

ग।यत्रीजपसहत्त्वस् ।

(१)गायत्र्य न परं जप्यं गायत्र्या न परन्तपः।

गायज्या न पर ध्यानं गायज्या न परं हुतस् ॥१॥

(२) 'यज्ञानां जपयज्ञोस्मि' यतो जपयज्ञे पशु-नीजादि वधो न सम्भवति ॥ २ ॥

भाषा ।

वर्तमान है इस कारण प्रपंच नहीं है" इःयादि वचनोंसे अन्यथारूपाति मायिक भेद त्यागपूर्वक बहाही स्चित होता है।

गायत्रीसे परे और कोई जप नहीं है। गायत्रीसे श्रेष्ठ कोई तप नहीं है। गायत्रीसे परे कोई ध्यान नहीं है। गायत्रीसे परे कोई हवन नहीं है॥ १॥

सब यज्ञमें जप यज्ञ में हूँ । क्योंकि यह पशुवीजादिके बधसे रहित है ॥ २ ॥

⁽१) ब्रह्मवाक्यम् ।

⁽२) भगवद्गीताथाम् अ०। १०६छो० २५।

(३) ये पाकयज्ञाश्चत्वारो विधियज्ञससन्विताः । सर्वे • ते जपयज्ञस्य कळां नाईन्ति षोडशीस् ॥ ३॥

जपसंदः।

(४) जपः स्यादक्षरावृत्तिर्मानसोपांश्वाचकैः । धिया यदक्षरश्रेणीं वर्णस्वरपदास्मिकाम् ॥ उच्चरेदर्थसुद्दिश्य सानसः स जपः स्वृतः॥१॥ जिह्नौष्ठौ चालयेकिश्चिद्देवतागतसानसः

किञ्चिच्छ्रवणयोग्यः स्यादुषांह्यः स जपःस्छृतः २ सन्त्रसुच्चारयेद्वाचा वाचिकः स जपः स्पृतः॥३॥

आषा ।

विधियज्ञ सहित जो चार प्रकारके पाकयज्ञ हैं वह जप यज्ञके सोलहवीं कलाके बराबर नहीं हैं ॥ ३ ॥

मन्त्रोंके अक्षरोंकी बार २ आवृत्ति करनेको जप कहते हैं वह जप मानसिक, उपांग्र और वाचिक भेद करके तीन प्रकारका है जिस मन्त्रके अक्षरोंकी पङ्क्तिको वर्ण, स्वर, पदयुक्त अर्थका उद्देश्य करके मनसे उच्चारण किया

जाता है वह मानसिक जप कहा जाता है ॥ १॥

जिह्ना और ओष्ठ किश्चित् चला करके देवतामें मन लगाकर किश्चित् सुननेके योग्य उपांग्र जप है ॥ २॥

वचनसे मन्त्रका उचारण करना वाचिक जप है ॥ ३॥

⁽३) मनु॰ अ॰।२।८६।

⁽४) तन्त्रसारे । वृसिंहपुराणे श्रीविष्णुधमोत्तरे च जपमेद उक्तः ।

(११६) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः।

THE PROPERTY OF THE PROPERTY O

संस्कृतम् ।

(१) विधियज्ञाज्जपयज्ञो विशिष्टो दशिभर्गुणैः। उपांद्याः स्याच्छतगुणः साहस्रो मानसः स्वृतःश

जपकालः।

(२) पूर्वा सन्ध्यां सनक्षत्रासुपासीत यथाविधि । गायत्रीसभ्यसेत्तावद्यावदादित्यदर्शनम् ॥ १ ॥ उपास्य पश्चिमां सन्ध्यामादित्यश्च यथाविधि । गायत्रीसभ्यसेत्तावद्यावत्तारां न पद्यति ॥२॥

आषा ।

विधियज्ञोंसे जीपयज्ञ दशगुण श्रेष्ठ है जीपयज्ञोंमें उपांग्र सीगुण श्रेष्ठ है उपांशुसे मानस जपहजारगुणा श्रेष्ठ है॥४॥

नक्षत्रोंके रहतेही आरंभकर सूर्यदेवके उदयपर्यन्त प्रातःसन्ध्याकर सविधि गायत्रीमन्त्रका अभ्यास करना चाहिये॥ १॥

सायं सन्ध्या और सूर्यदेवकी उपासनाकर जबतक तारागण न दिखाई पढें तब तक यथाविधि गायत्री अन्त्र-का अभ्यास करना चाहिये॥ २॥

⁽१) मनु०। अ०२। क्लो०८५।वृ० यो० याज्ञ० अ०७।१३६।

⁽२) हारीतसंहिता ४ | १८-१९

जास्याः तत्त्वस् ।

संत्कृतम्।

(१) गृहे ह्येकगुणं जप्यं नद्यां तु द्विगुणं स्ट्तस् । गवांगोष्टे शतगुणसम्यागारे शताधिकस् ॥१॥ सिद्धक्षेत्रे च तीर्थे च देवतायारच सित्तिभौ । सहस्रं शतकोटीनासनन्तं विष्णुसित्तिभौ ॥ २॥ (२)कशाचिदपि नो विद्वान्गायत्रीसुदके जपेत् । गायञ्चिसमुखी प्रोक्ता तस्मादुत्थाय ताञ्जपेत्॥३॥

भाषा।

घरमें जप करनेसे एक गुण फल है नदीके तटपर दूना फल कहा गयाहै गोशालामें सौगुण अग्न्यागार (अभिहोत्र स्थान) में सौगुणसे अधिक फल है ॥ १ ॥

सिद्ध क्षेत्रमें, तीर्थमें, देवमन्दिरके निकट सौ करोडका हजारगुना फल होता है और विष्णुके निकट अनन्त फल है॥ २॥

हरू ह ॥ र ॥ विद्वान कभी जल्रमें गायत्री न जप क्योंकि गायत्री

विद्वान् कथा जलम गायत्रा न जप क्याकि गायत्रा अप्रितुखी कही गई है इस कारण जलके बाहर गायत्री जपे॥३॥

⁽१) वृ० वोगिया० अ० ७ । १४३ ।

⁽२) गोभिल०

जपविधिः।

संस्कृतम् ।

(१) स्नानं कृत्वा शुचौ देशे बद्धा रुचिरमासनम्। त्वया मां हृदि सश्चिन्त्य सश्चिन्त्य स्वगुरुं ततः॥१॥ (२)उदङ्गुखः प्राङ्मुखो वा मौनी चैकाप्रमानसः। विशोध्य पञ्चतत्त्वानि दहनप्रावनादिभिः॥ २॥ मन्त्रन्यासादिकं कृत्वा सकळीकृतविग्रहः। आवयोर्विग्रहं ध्यायन्त्राणापानौ नियम्य च॥३॥ भाषा।

स्तानकर पवित्र स्थानमें रुचिर (मृदु) आसन बाँध तुम्हारे (पार्वती) सहित हमारी (शिव) और गुरुकी हृद्य-में चिन्तनाकर ॥ १ ॥

उत्तर या पूर्वमुख होकर मौन और एकाप्र चित्त हो दहन प्लावनादिसे पञ्चतत्त्वोंका विशोधनकर और मन्त्रन्यासादि-से ब्राह्मीय शरीर हमारे (शिव-पार्वती) रूपका ध्यान करते हुए प्राण अपान वायुको संयतकर जप करना चाहिये॥ ३॥

⁽१) शिव पु॰वांयु सं॰अध्या॰ १२ श्लो॰ १२२-१२४ (२) " " " " १४८

The Principles of the Principl

कंचुकी नग्तो सुक्तकेशो सलावृतः। अपरित्रकरोऽशुको विलपन्न जपेत्काचित् ॥ ४ ॥

मालाविवरणस् ।

संस्कृतस् ।
संस्कृतस् ।
संस्कृतस् ।
संस्कृतस् ।
स्राणीपी कंचुकी नग्नो सुक्तः
अपित्रकरोऽशुक्रो विलपन्न व सालाविवरण
सालाविवरण
सालाविवरण
सालाविवरण
रेखवाष्ट्रगुणं विचात्पुत्रजीविद्यः
गतं स्थाच्छंलमणिभिः प्रवारे
स्पाटिकेर्दशसाहस्रंमीकिकेर्ल
भाषा ।
पगडी वांथकर अङ्गा पहनकर नम्न
गुरुवन्द वॉध अपवित्र हाथसे अशुक्र
हुए कभी जप न करे ॥ ४ ॥
अङ्गुलियोंकी पोरोंमें जप करनेसे
यालामें दशगुण ॥ १ ॥
शंख और मणियोंकी मालामें शः
सहस्रगुण स्फीटककी मालाम दर्श्यालामें लक्षगुण ॥ २ ॥
(१) शिवपुः वायुक्तः अध्याः १ (१) अंगुल्या जपलङ्ख्यानसेकसेकसुदाहृतस्। रेखचाष्ट्रगुणं विचात्पुत्रजीवैर्दशाधिकम् । ॥ १ ॥ ातं स्याच्छंलभणिभिः प्रवालैस्तु सहस्रकम् । स्फाटिकेर्दशसाहस्रंसोकिकेर्रक्षसुच्यते ॥ २॥

पगडी बांधकर अङ्गा पहनकर नमावस्थामें केश खुलेहुए गुल्इनन्द वॉंघे अपवित्र हाथसे अग्रुद्धदशामें और बोलते

अङ्गुलियोंमें जप करनेसे एकगुण फल होता है अंगुलियोंकी पोरोंमें जप करनेसे अष्टगुण पुत्रजीवीकी

शंख और मणियोंकी मालामें शतगुण धूँगेकी मालामें सहस्रगुण स्फीटककी मालाम दशसहस्रगुण,

पद्माक्षेर्दशलक्षं तु सौवर्णैः कोटिरुच्यते । कुशप्रन्थ्या च रुद्राक्षेरनन्तगुणितं अवेत् ॥ ३॥

- (१) तज्जपस्तदर्थभावनम् ॥ १॥
- (२) नोचेर्जपं च संकुर्याद्रहःकुर्यादतन्द्रतः। सञ्याहृतिमनस्तूष्णीस्मनसा चापि चिन्तयेत्॥२॥
 - (३) सनः प्रहर्षणं शौचं मौनं संत्रार्थीचन्त-
- नम् । अञ्यद्यत्वसनिवेदो जपसस्पत्तिहेतवः ॥ ३ ॥

आषा ।

कमलगहेकी मालामें दशलक्षगुण सुवर्णकी मालामें कोटिगुण. कुशग्रन्थि और रुदाक्षकी मालामें जप करनेसे अनन्त फल होता है ॥ ३ ॥

जिस मंत्रका जप करे उसीके अर्थकी भावना करता रहे॥ १॥

उच्चत्वरसे जप न करे, आलस्यको त्यागकर एकान्त स्थानमें वाणीको रोककर एकाग्रमनसे मंत्रका जप करे और मनमें ध्यान करता रहे ॥ २ ॥

प्रसन्नमन, पवित्रता, मौन, मंत्रार्थ-चिन्तन, चित्तकी एकाप्रता और अखेद ये जपके फड़के हेतु हैं ॥ ३ ॥

⁽१) पातं० यो० स्० पा०१२८

⁽२) अमिपुराणे।

⁽३) ब्रह्मा०

(179)

जासंख्या।

संस्कृतस् ।

(१) असंस्थासासुरं यस्माक्तस्माक्तद्वाणयेद्श्व। वम् ॥ १ ॥

(२) सात्रित्रीं सहस्रकृतः प्रातर्जपेच्छतकृत्व-परिनितः कृतो वा ॥ २॥

(३) सहस्रकृत्वः सावित्रीं जपेदव्यवसानसः शतकृत्वोपि वा सम्यक्ष्राणायामपरो यदि ॥ ३॥

सप्तर्याहृतिपूर्वां च आद्यन्तप्रणवान्वितास्।

सनला वा जपेचैव दशकृत्वोवरः स्वृतः॥ ४॥

भाषा ।

विना संख्यांक जप आसरी है तिस कारणसे गिनती पूर्वक जप करना आवश्यक है ॥ १ ॥

प्रातःकालमें गायत्री मंत्र एक हजार जपै अथवा सौ वार अथवा अपरिमित ॥ २ ॥

अली भांति प्राणायामके पश्चात् एक हजार अथवा सौबार सावित्रीमंत्र चित्तकी एकाप्रतापूर्वक जपै ॥ ३ ॥

सात व्याहतियों सहित गायत्रोक आदि अन्तेमें प्रणव

युक्त मानस जप करै तो द्शवार भी श्रेष्ठ कहा गया है॥४॥

⁽१) वृ॰ पाराश्चरसं॰ अ॰ ५। ४१

⁽२) बौधायनधर्भसूत्रे प्रश्न०२ अ० स्०१२।

⁽३) योगियाज्ञवल्क्यः।

(१) कल्पोक्तैव कृते संख्या त्रेतायां द्विगुणा भवेत्।द्वापरे त्रिगुणा प्रोक्ता कलौ संख्या चतुर्गुणा८।

जपफलम्।

(२) सहस्रपरमां देवीं शतमध्यां दशावराम्। गायत्रीं यो जपेद्विष्रो न स पापेन लिप्यते ॥१॥

(३) गायत्रीं विस्तराद्दिञ्यां पठेदेव शृणोति

वा । सुच्यते सर्वपापेम्यः परम्ब्रह्माधिगच्छतिं॥२॥

भाषा ।

सतयुगमें शास्त्रोक्त संख्या, त्रेतामें उसका दूना, द्वापरमें तिग्रुना, कलियुगमें चौगुना जप करना चाहिये॥ ५॥

गायत्री देवीका हजार वार जप श्रेष्ठ है, सौ मध्यम है, दश निकृष्ट है इस प्रकार जो गायत्रीका जप करता है वह बाह्मण पापसे लिप्त नहीं होता है ॥ १ ॥

जो पुरुष विस्तार पूर्वक इस दिव्य गायत्रीका जपना श्रवण करें वह सब पापोंसे छूट कर परब्रह्मरूप होजाता है ॥ २ ॥

⁽१) वैशंपायनसं०

⁽२) अत्रिस्मृ० अ०२ रहो। ९

⁽३) ब्रह्मवाक्यम् ।

लंत्स्वतस् ।

- १) जपनिष्ठो हिजः श्रेष्ठोऽविलयज्ञफल लभेत्।सर्वेषामेव <mark>यज्ञानां जाय</mark>तेऽली महाफलः ॥३॥
- (२) दशभिर्जन्यजनितं शतेन च पुरा कृतस्। सहस्रेण त्रिजन्सोत्थं गायत्री हन्ति दुष्कृतस् ॥श॥
- (३) गायत्रीं संस्मरेचोगात्स याति ब्रह्मणः पदम्। गायत्रीजपनिरतो मोक्षोपायं च विन्दति॥५॥

भाषा ।

AND DESIGNATION OF THE CONTRACTION OF THE PROPERTY OF THE PROPERTY OF THE PROPERTY OF THE STATE OF THE PROPERTY OF THE PROPERT जपमें निष्ठावाला दिज श्रेष्ठ है और समस्त फल प्राप्त करता है। सब यज्ञोंमें गायत्री मन्त्रके जपका महाफल है ॥ ३ ॥

द्शबार जप करनेसे इस जन्मका और सौबार जप करनेसे पहिले जन्मके और हजार वार जप करनेसे तीन जन्मों (पहिले जन्मका, इस जन्मका और अगले जन्म) के पापको गायत्री नाश करती है ॥ ४ ॥

जो पुरुष एकाग्रचित्त करके गायत्रीका स्मरण करता है वह ब्रह्म पदको प्राप्त होता है । गायत्रीके जपमें निरत पुरुष मोक्षके उपायको प्राप्त करता है ॥ ५ ॥

⁽१) तन्त्रसारे ए० ३९। (शिवधर्मे च)

⁽२) वृ॰ पाराश्चर सं॰ अ॰ ५ ख्ले॰ ६२।

⁽ ३) बृहत्पाराश्चरसं अ० ५ श्लो०७४शंखस्मृ० अ०१२।श्लो०। ३०

(१) सहस्रकृत्वस्त्वभ्यस्य बहिरेतित्रिक द्विजः। सहतोप्येनेसा सासात्त्रचेवाहिर्विमुच्यते ॥ ६॥ साविज्याश्चेव संत्रार्थं ज्ञात्वा चैव ययार्थतः। तस्यां यदुक्तं चोपास्य ब्रह्मभूयाय कस्पते॥ १॥ (योगियाज्ञवस्वयः)

ब्रह्महत्या सुरापानं गुरुदाराभिमर्षणम् । यचान्यद्दुष्कृतं सर्वं पुनातीत्याह वै मनुः ॥ ५॥ भाषा ।

जो द्विज ग्रामसे बाहर एकान्त स्थानमें प्रणवन्याहति युक्त गायत्रीका जप सहस्रवार एक महीने तक करता है जैसा सर्प केंजुळीको छोड़ता है इसी प्रकार वह सब महान् पापोंसे छूट जाता है ॥ ६ ॥

गायत्री मंत्रका यथार्थ अर्थ जानकर उस्में कहेडुएकी जो उपासना करता है वह ब्रह्म होताहै ॥ ४ ॥

ब्रह्महत्या, सुरापान, गुरुपत्नीगमन और इससे इंतर सर्वपातक गायत्रीमन्त्रेक जपसे नाश होताहै ऐसा मनुने कहा है ॥ ५ ॥

⁽३) मनु० अ०२ च्लो० ७९ ।

॥ भीः ॥

अथ गायम्य हक्स ।

संस्कृतस् ।

गायत्री श्रुतिजनती हि इहादिया श्रीसाङ्ख्यायनसहगोत्रका त्रिसन्ध्या। षट्कुक्षिः किल त्रिपदा च पंचलीिलः सस्भाव्या प्रतिवदनं जनैक्तिनेत्रा ॥ १ ॥ सावित्री शरदसृतांशुलक्षकान्तिः गुक्कसम्बसनधरा प्रभा सुरेशी ॥ . ध्येया ला मणितपनीयभूषिताङ्गी तिर्यग्यारसत उपर्यधः ककुप्सु ॥ २॥

Company of the state of the sta

भाषा।

A SULL OF SULL SERVICE SERVICES SERVICE अर्थ-वेदमाता गायत्री ही ब्रह्मविद्या है। यह यन गोत्रवाली त्रिसन्ध्या (प्रातर्मध्याह्रसायङ्कालीना) षट्कु-क्षि (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्योति-परूपा) पश्चमौलि (अधिलोक, अधिज्योतिष, अधिविद्य अधिप्रज और अध्यात्मरूपवाली) प्रतिवद्नित्रवेत्रा (प्रति-सुख, ध्याता, ध्यान और ध्येयस्वरूपा) त्रिपदा ऋज्यज्ञः साम तीन पदवाछी) किछ (निश्चयकरके) सम्भान्या (भावना किये जानेवाली है) ॥ १ ॥

शरद कालके लक्षचन्द्रमाके सदश कान्तिवाली श्रेतमाल्य तथा श्वेतवस्त्र धारण करनेवाली रानकाश्चनसे शृषित अंगदा-ली वह उत्कृष्ट ज्योतिवाली देवी सावित्री ऊपर नीचे तिळें सब दिशाओंमें विराजमान है ऐसा ध्यान करे ॥ २ ॥

विश्राणां अजित कत्मण्डलुं च दण्डसक्षाणां श्रजमभयप्रदां द्विजानाम्॥
श्रीविष्णुप्रियहृद्यां च ब्रह्मभालासम्न्यास्यां गिरिशशिखां परां सदाप्तः॥ ३॥
प्रातस्त्वं सवितारे बालिकास्व भाव्या
भण्याहे शिवयुवती जरा प्रदोषे॥
आत्मस्या भगवति गीयसे निशायां
वर्णानां त्वमसि गतिप्रदा चतुर्णाम्॥ ४॥

भाषा ।

विष्णु जिनका प्रिय हृद्य, ब्रह्मा ललाट, अपि सुख, और शिव शिखा हैं इसप्रकार द्विजोंकी अभय देनेवाली कमण्डल, दण्ड, अक्षमाला धारण करनेवाली परात्मिका भगवतीको आप्तजन भजते हैं॥ ३॥

हे माता ! सूर्यमण्डलमें प्राप्तम्काल बालिका (ब्राह्मी), मध्याह्नकाल युवती शैवी, और सायङ्गाल बृद्धा (वैष्णवी) रूपसे तू भावना की जाती है । तथा हे भगवती ! तू रात्रिमें (मनके लय होनेसे सब किरणोंके सिमिट जानेपर सुषुप्तिमें) आत्मस्था कहलाकर गाईजाती है (अत एव) तू चारो वर्णोंकी गति देनेवाली है ॥ ४ ॥ नायञ्चष्टकस् । (१२७)

रंस्कृतस् ।

सामान्ते समान्यहिम् आत्यानाश्चाः देशरोऽरं समित रथा हि कोशिकस्य ॥ आर्याणां खळु परमात्मशक्तिरेका चिद्रिया जगित चराचरे विश्वासि ॥ ५ ॥ अन्यश्चं स्वसिति यचः शृणोति जीवः पादास्यां चळति निरीक्षते पदार्थान् ॥ सामयेत्किसपि करोति तस्वयेव । र्क्षाणास्त्यां सततमसन्तवो सवन्ति ॥ ६ ॥

भाषा ।

ह माता । तेरे भजनकी महिमासे शीव आत्मसाक्षा-त्कार होता है जिस प्रकार विश्वामित्रको हुआ । आर्य-जनोंकी तृ अंकेळी चैतन्यात्मिका विद्या ब्रह्मशक्ति चराचर जगतमें विराजती है ॥ ५ ॥

いっちょうじ ストンドンというしょうしょうし なくなる さらばない 自動の

जीव जो अन्न खाता है, श्वास छेता है, वचन मुनता है, पैरोंसं चछता है, पदार्थोंको देखता है अर्थात् जो कुछ करता है वह तुझसे ही अर्थात् तुझ शक्तिरूपसे ही सब कुछ करता है । हे माता ! तुझको नहीं माननेवाछे संदेव क्षीण (श्रीहीन) रहते हैं ॥ ६॥ (१२८) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः।

संस्कृतम्।

ओंकारस्वमिस स्याय्य भूर्भुवः स्वः त्रैलोक्यप्रसिविन ब्रह्मिविष्णुरुद्राः ॥ यिकश्चिद्भवति भविष्यति प्रभूतं सर्व तत्त्वमिस भवानि निर्विकस्ये ॥ ७ ।.॥ या वाण्यो मुखकमलाद्विनिस्सरिन्त भक्तानां तव कृपया भवन्ति सत्यम् ॥ सन्तापक्षयकिर पुत्रवत्सलेऽम्ब कस्याणि प्रयतयशः प्रदे प्रसीद ॥ ८॥

भाषा।

हे मेरी माता ! तू ॐरूप है, तू भूः, भुवः, स्वः तीनों व्याहितयाँ है । हे तीनों लोककी उत्पन्न करनेवाली भवानी! तू ही ब्रह्मा, विष्यु और रुद्ध है । हे निर्विकल्पात्मिके ! जो कुछ होता है, होगा और हुआ वह सब तू ही है ॥७॥ हे प्रत्रवत्सला माता ! भक्तोंके मुखारविन्दसे जो वोली निकलती है वह तेरी कृपासे सत्य होती है । हे सन्ता-पको दूर करनेवाली ! कल्याण करनेवाली ! पवित्र यश देनेवाली ! तू प्रसन्न हो ॥ ८॥ नायत्र्यप्टकम् । (१२९)

संस्कृतम् ।

गायज्यप्रकसिद्मार्यतन्यतं यद् । भक्त्या तत्पठति सदा द्विजः प्रशान्तः ॥ सावित्रीजपफलमश्नुते ललीलं जानीते सपदि च रासनन्दनास्याम् ॥ ९॥

古经存分的 人名 人名 化有效的

भापा।

इस आर्यसम्मत गायत्रीके अष्टकको भक्तिपूर्वक शान्त-त्रित को द्विजन सदा पढ़ते हैं, वे अनायास ही गाय-त्रीके जपका फल प्राप्त करते हैं और रामनन्दनकी माता (गायत्री) से परिचित होते हैं ॥ ९ ॥ इति फैजाबादीय हिन्दू हाईस्कूलस्थमधानसंस्कृताध्यापकेन श्रीरामनन्दनसहायेन निर्मितं गायज्यष्टकं सम्पूर्णम् ॥ ॥ गायज्यप्रणमस्तु ॥

मूर्यप्रार्थना ।

संस्कृतम् ।

तमः सिवत्रे जगदेकचक्षुषे
जगत्प्रसूति-स्थिति-नारा-हेतवे॥
त्रयीमयाय त्रिगुणात्मधारिणे
विरिश्चिनारायणशंकरात्मने॥१॥
यस्योदयेनेह जगत्प्रबुध्यते
प्रवर्तते चाखिलकर्मसिद्धये॥
ब्रह्मेन्द्रनारायणस्द्रवन्दितः
स नः सदा यच्छतु संगलं रिवः॥१॥

भाषा ।

जगत्के मुख्य वक्षु, और जगत्के पालन, पोषण, और लयके कारण: ऋग्यज्ञस्सामक्रप, तीनों गुणों(सत्त्व-रज-तम)के धारण करनेवाले, ब्रह्मा,विष्णु,महेशात्मक जो श्रीस्पेंदेव, हैं उनको नमस्कार है ॥ १ ॥

जिसके उदय होनेमें संसार जगकर सम्पूर्ण कार्यसिद्धि-के लिये प्रवृत्त होता है और ब्रह्मा, इन्द्र, विष्णु, महादेव वन्दित जो श्रीसूर्यदेव हैं वह सदा हम लोगोंको सङ्गळ दें॥ १॥

संस्कृतस्।

नसोऽरतु पूर्णण सहस्ररवस्ये सहस्रवालान्वितसम्भवास्येते ॥ सहस्रयोगोन्द्रवभावसागिने सहस्रसंख्यायुगधारिणे नमः ॥ ३ ॥ यन्सण्डलं दीतिकरं विशालं रत्नप्रभं तीत्रमनादिख्यम् ॥ वारिद्यदुःखक्षयकारणं च युनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ ४ ॥ यन्सण्डलं देवगणैः सुपूजितं विद्येः स्तुतं भावनमुक्तिकोविदम् ॥

आषा ।

अनन्त किरणवाले, तथा सहस्रों शाखाओंके प्रकट कर-नेवाले, अनेक प्रकार कार्योंके करनेवाले, ऐसे जो श्रीसूर्यदेव हैं उनको नमस्कार है ॥ ३ ॥

जिसका मण्डल महान् प्रकाशक और रत्नोंके समान कान्तिवाला, तीक्ष्ण, अनादि तथा दारिद्य और दुःखोंका नाश करनेवाला है ऐसे वरणीय श्रीसूर्यदेव हमको पवि-न्न करें ॥ ४ ॥

जिसका मण्डल देवगणेंसि पूजित तथा ब्राह्मणें करके प्रार्थनीय, तथा श्रद्धा करके मुक्ति देनवाला है उस देवदेव

तं देवदेवं प्रणमामि सूर्यं
पुनातु मां तत्तवितुर्वरेण्यम् ॥ ५ ॥
यन्मण्डलं ज्ञानघनं त्वगम्यं
न्रैलोक्यपूज्यं त्रिगुणात्मरूपम् ॥
समस्ततेजोमयदिव्यरूपं
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ ६ ॥
यन्मण्डलं गूडमतिप्रबोधं
धर्मस्य वृद्धं कुरुते जनानाम् ॥
यत्सर्वपापक्षयकारणं च
पुनातु मां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ ७ ॥

भाषा ।

श्रीसूर्यको प्रणाम करता हूं, वह श्रेष्ठ श्रीसूर्यदेव हमको पवित्र करें ॥ ५ ॥

जिसका मण्डल ज्ञानधूर्ति, अगम्य तीनों लोंकोंसे रजनी-य, त्रिगुणात्मरूप, सम्पूर्ण तेजोमय, तथा अलौकिक रूपवाला है ऐसे वरणीय जो श्रीसूर्यदेव हैं वह हमको पवित्रकों ॥६॥ जिसका मण्डल योगियोंके जाननेयोग्य, पुरुषोंमें धर्म-की वृद्धि करनेवाला, तथा सम्पूर्ण पापोंका नाशक है ऐसे वरणीय जो श्रीसूर्यनारायण हैं वह हमको पवित्रकरें ॥७॥

एत्सपडलं व्याधिहिताशदक्षं यहरयजुःसायसु स्टब्यगीतस्॥ प्रकाशितं येन च सूर्भुदः रहः पुनातु सां तत्सिकृत्रेरेण्यस्॥८॥ एत्सण्डलं सर्वजनेषु पूजितं ज्योतिश्च सुर्यादिह सर्व्यलोके॥ यत्सालकालादिसनादिक्रं पुनातु सां तत्सिकृत्रेरेण्यस्॥९॥ यन्सण्डलं विष्णुचतुर्भुखारव्यं यदक्षरं पापहरं जनानाम्॥

भाषा ।

なが、ほどもならななななななるとなるなるななないと

जिसका मण्डल ब्याधियोंके नाश करनेमें कुशल, ऋक्, यज्ञ, साम करके गान किया हुआ, तथा भूर्भुवः स्वः का प्रकाशक है ऐसे वरणीय श्रीसूर्यभगवान् हमको पवित्र हरें॥ ८॥

जिसका मण्डल सर्वजनोंसे प्रजित, तथा इस मनुष्यलो-कका प्रकाशक है और जो अनादिरूप तथा कालका भी आदिकाल है ऐसे श्रेष्ठ सविता भगवान् हमको एवित्र करें॥ ९॥

जिसका मण्डल विष्णु तथा ब्रह्माकी संज्ञासे प्रख्यात है; जो अविनाशी तथा सर्व प्राणियोंके पापींका नाज्ञ कर- (१३४) गायत्रीमन्त्रार्थभास्करः ।

संस्कृतम् ।

यत्कालकरुपक्षयकारणं च पुनातु सां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ १० ॥ यन्मण्डलं विश्वसृजां प्रसिद्ध-सुत्पत्तिरक्षाप्रलयप्रगल्भम् ॥ यस्मिञ्जगत्संहरतेऽखिलं च। पुनातु सां तत्सवितुर्वरेण्यम् ॥ ११ ॥ यन्मण्डलं सर्वगतस्य विष्णो-रात्सा परं धास विशुद्धतत्त्वस् ॥ सूक्ष्मान्तेरैयोगपथानुगम्यं पुनातु मां तस्सवितुर्वरेण्यम् ॥ १२ ॥

सावा ।

नेवाला है और जो काल तथा कल्पका नाश करनेवाला है

ऐसे श्रेष्ठ सूर्यदेव हमको पपित्र करें ॥ १० ॥

निसका मण्डल सृष्टिकर्ताओंमें प्रसिद्ध, उत्पत्ति, पालन, तथा लयकरनेमें अतिशक्ति-शाली है और जिसमें सम्पूर्ण संसार लीन होजाते हैं से श्रेष्ठ श्रीसूर्य

हमको पवित्र कुरैं ॥ ११ ॥

जिसका मण्डल सर्वन्यापी विष्णुका स्वरूप है, जो परम धाम और जो सुक्ष्महृद्यवालें।से योगमार्ग करके प्राप्तव्य है ऐसे श्रेष्ठ श्रीसूर्य अगवान् हमको पवित्र करें॥ १२॥

यन्त्पडलं ब्रह्मदिन्ने वदन्ति गायन्ति यद्यारणसिद्धसंघाः ॥ यन्त्पण्डलं नेदिनः स्तरन्ति पुनातु सां तस्तिनितुर्वरोण्यम् ॥ १३ ॥ यन्त्रप्डलं नेदिन्दोपगीतं यद्योगिनां योगपथानुगन्यम् ॥ सत्तर्वनेद्यं प्रणमासि सूर्यं पुनातु सां तस्तिनितुर्वरोण्यम् ॥ १४ ॥ भाषा ।

化双克基克洛斯 医肾炎 医抗原药

वस्नज्ञानी जिसके मण्डलका कथन करते हैं; चारण तथा लिङ्गण जिसका गान करते हैं और वेद-वेत्ता गण जिसका स्मरण करते हैं ऐसे श्रेष्ठ श्री सूर्य भगवान् हमको. पवित्र कैरें ॥ १३ ॥

वेदवेत्ताओंने जिस मण्डलका गान किया है और जो योगियोंद्वारा योग पथसे प्राप्य हैं ऐसे सबके जानने योग्य शीसूर्यस्वामीको मैं प्रणाम करता हूं। वह श्रेष्ठ क्षीभास्कर अगवान् हमको पवित्र करें॥ १४॥

इति भाषाटीकासहितो गायत्रीमन्त्रार्थमास्करः समाप्तः ।

<mark>(Pada Dalak Dalak Dalak Dalak</mark> H

> पुस्तक मिलनेका पता-बाबू बलदेव श्रसाद, हाईकोर्ट वकील फैज

दूसरा पता— खेमराज—श्रीकृष्णदास, ''भीवेङ्करेश्वर'' स्टीम् प्रेर